।। श्रीहरिः ।।

122

एक लोटा पानी



गीताप्रेस-गोरखपुर

॥ श्रीहरिः ॥

एक लोटा पानी

(जीवनको ऊँचा उठानेवाली चौबीस रोचक कहानियाँ)



लेखक

श्रीपारसनाथ सरस्वती

122

॥ श्रीहरिः ॥

एक लोटा पानी

(जीवनको ऊँचा उठानेवाली चौबीस रोचक कहानियाँ)



लेखक

श्रीपारसनाथ सरस्वती

प्रकाशक—गोबिन्दभवन-कार्यालय, गीताप्रेस, गोरखपुर

सं० २०१८ से २०५७ तक १२,२५,०००
सं० २०५८ बयालीसवाँ संस्करण ५०,०००
योग १२,७५,०००

मूल्य—दस रुपये

मुद्रक—गीताप्रेस, गोरखपुर—२७३००५
फोन : (०५५१) ३३४७२१; फैक्स ३३६९९७

visit us at: **www.gitapress.org** | e-mail: **gitapres@ndf.vsnl.net.in**

॥ श्रीहरिः ॥

विषय-सूची

विषय			पृष्ठ-संख्या



एक लोटा पानी

(१)

चैतका महीना था। ग्वालियर राज्यका मशहूर डाकू परसराम अपने अरबी घोड़ेपर चढ़ा हुआ, जिला दमोहके देहातमें होकर कहीं जा रहा था। लकालक दोपहरी थी। प्यासके कारण परसरामका गला सूख रहा था। कोई तालाब, नदी या गाँव दिखायी न देता था। चलते-चलते एक चबूतरा मिला, जिसपर एक शिवलिङ्ग रखा था। छोटे और कच्चे चबूतरेपर बरसातके पानीने छोटे-छोटे गड्ढे कर दिये थे। इसलिये महादेवजीकी मूर्ति कुछ तिरछी-सी हो रही थी। यह देख परसराम घोड़ेसे उतरा और उसे एक पेड़से बाँधकर अपनी तलवारसे महादेवजीकी पिण्डीको ठीक बिठलाने लगा। परसराम बोला—'महादेव गुरुजी हैं। परशुरामके गुरु थे, इसलिये मेरे भी गुरु हैं। वे भी ब्राह्मण थे, मैं भी ब्राह्मण हूँ। उन्होंने अमीरोंका नाश किया था और गरीबोंका पालन किया था, वही मैं भी कर रहा हूँ। मूर्ख लोग मुझे डाकू कहते हैं। धनवान्‌से जबरन् धन लेकर दीनोंका पालन करना क्या डाकूपन है? है तो बना रहे। ग्वालियर राज्यने मेरे लिये पाँच हजारका इनामी वारंट जारी किया है और भारत-सरकारने पचीस हजारका। मेरी गिरफ्तारीके लिये तीस हजारका इनाम छप चुका है। वे लोग अमीरोंके पालक और गरीबोंके घालक हैं। इसलिये मुझे डाकू कहते हैं। डाकू वे हैं या मैं? इसका निर्णय कौन करेगा? खैर कोई परवाह नहीं। जबतक शंकर गुरुका पंजा मेरी पीठपर है तबतक कोई परसरामको गिरफ्तार नहीं कर सकता।

लेकिन क्या मैं आज प्यासके मारे इस जंगलमें मर जाऊँगा? मेरे पंद्रह साथी—जो सब पढ़े-लिखे और बहादुर हैं—अपने-अपने अरबी घोड़ोंपर चढ़े मुझे खोज रहे होंगे। जब वे मुझे इस जंगलमें मरा हुआ पायेंगे, तब वे नेत्रहीन होकर बड़े दुखी होंगे। बाबा! गुरुदेव! क्या एक लोटा पानीके बिना आप मेरी जान ले लेंगे?'

तबतक एक बुढ़िया वहाँ आयी। उसके हाथमें एक लोटा जल था और लोटेके ऊपर एक कटोरी थी, जिसमें मिठाई रखी थी।

परसराम—बूढ़ी माई! तुम कहाँ रहती हो?

बुढ़िया—थोड़ी दूरपर सेखूपुर गाँव है। बागोंमें बसा है, इसलिये दिखायी नहीं देता। वहीं मेरा घर है। जातिकी अहीर हूँ बेटा!

परसराम—यहाँ क्यों आयी हो?

चबूतरेपर पानी और मिठाई रखकर बुढ़िया बैठ गयी और रोने लगी। परसरामने जब बहुत समझाया तब वह कहने लगी—'बेटा! मौतके दिन पूरे करती हूँ। घरमें एक लड़का था और बहू थी। मेरा बेटा-बिहारी तुम्हारी ही उमरका था। उसीने यह चबूतरा बनाया था और कहींसे लाकर उसीने महादेव यहाँ रखे थे। रोजाना पूजा करता था। परसाल इस गाँवमें कलमुही ताऊन (प्लेग) आयी। बेटा और बहू दोनों एक दस सालकी कन्या छोड़कर उड़ गये। रोनेके लिये मैं रह गयी। जबसे बेटा मरा, तबसे मैं रोज एक लोटा पानी चढ़ा जाती हूँ और रो जाती हूँ। इस साल वैशाखमें नातिन चम्पाका विवाह है। घरमें कुछ नहीं है। न जानें, कैसे महादेव बाबा चम्पाका विवाह करेंगे।'

परसराम—महादेव बाबा चम्पाका विवाह खूब करेंगे। तुम यह पानी मुझे पिला दो, बड़ी प्यास लगी है।

बुढ़िया—पी लो बेटा, पी लो। मिठाई भी खा लो। यह पानी जो तुम पी लोगे तो मैं समझूँगी कि महादेवजीपर चढ़ गया।

आत्मा सो परमात्मा। मैं फिर चढ़ा जाऊँगी। पी लो बेटा, पी लो, पहले यह मिठाई खा लो।

इतना कहकर बुढ़ियाने पानीका लोटा और मिठाईकी कटोरी परसरामके सामने रख दिये। मिठाई खाकर और शीतल स्वच्छ जल पीकर परसराम बोले—'चम्पाका विवाह कब होगा माई!'

बुढ़िया—वैशाखके उँजेरे पाखकी पञ्चमीको टीका है। केसरीपुरसे बारात आयेगी।

परसराम—विवाहके लिये तुम चिन्ता कुछ मत करना। तुम्हारी चम्पाका विवाह महादेव ही करेंगे।

बुढ़िया—तुम कौन हो बेटा? तुम्हारी हजारी उमर हो। गाँवतक चलो तो तुमको कुछ खिलाऊँ। भूखे मालूम होते हो।

परसराम—भूखा तो हूँ, पर गाँव मैं नहीं जा सकता। मेरा नाम परसराम है और लोग मुझे डाकू कहते हैं। आगरेके कप्तान यंग साहब, जिन्होंने सुल्ताना डाकूको गिरफ्तार किया था, तीस सिपाहियोंके साथ मेरे पीछे लगे हुए हैं। मेरे साथी छूट गये हैं, इसलिये मैं गाँवमें नहीं जा सकता। जिस दिन चम्पाका विवाह होगा, उस दिन तुम्हारे गाँवमें पाँच मिनटके लिये आऊँगा।

बुढ़िया—तुम डाकू तो मालूम नहीं पड़ते—देवता मालूम पड़ते हो।

घोड़ेपर सवार होकर परसरामने कहा—'अब ऐसा ही उलटा जमाना आया है माई! उदार और बहादुरको डाकू कहा जाता है और महलोंमें बैठकर दिनदहाड़े गरीबोंको लूटनेवालोंको रईस कहा जाता है। धर्मात्मा भीख माँगते हैं, पापी लोग हुकूमत करते हैं। पतिव्रताएँ उघारी फिरती हैं, छिनालोंके पास रेशमी साड़ियाँ हैं। कलियुग है न! मैं जाता हूँ। मेरा नाम याद रखना पञ्चमीको आऊँगा।'

परसराम चले गये। बुढ़ियाने भी घरकी राह ली। महादेवजीपर

जल चढ़ाकर उसने चम्पासे परसरामके मिलनेकी सारी कहानी बयान कर दी; गाँवका मुखिया भी वहीं खड़ा था। उसने भी सारा हाल सुना। मुखियाने सोचा—मेरा भाग जग गया, इनामका बड़ा हिस्सा मैं पाऊँगा। थानेमें जाकर रिपोर्ट लिखायी कि 'वैशाख शुक्लपक्षकी पञ्चमीके दिन परसराम सेखूपुरमें चम्पाके विवाहमें शामिल होने आयेगा। पुलिसके द्वारा यह समाचार यंग साहबको मालूम करा देना चाहिये। अगर उस रोज डाकू परसराम गिरफ्तार न हुआ तो फिर कभी न हो सकेगा।'

(२)

चौथके दिन, बिहारी अहीरके दरवाजेपर पाँच गाड़ियाँ आकर खड़ी हुईं। एकमें आटा भरा था। एकमें घी, शक्कर और तरकारियाँ भरी थीं। एक गाड़ीमें कपड़े-ही-कपड़े थे, तरह-तरहके नये थानोंसे वह गाड़ी भरी थी। चौथी गाड़ीमें नये-नये बर्तन भरे थे और पाँचवीं गाड़ी तरह-तरहकी पक्की मिठाइयोंसे भरी थी। गाड़ीवानोंने सब सामान बिहारी अहीरके घरमें भर दिया। लोगोंने जब यह पूछा कि 'यह सामान किसने भेजा?' तब गाड़ीवानोंने कहा कि 'हमलोग भेजनेवालेका नाम-धाम कुछ नहीं जानते। हमलोग दमोहके रहनेवाले हैं। किरायेपर गाड़ी चलाया करते हैं। हमलोगोंको किराया अदा कर दिया गया। हमलोगोंको केवल यही हुक्म है कि यह सामान सेखूपुरके बिहारी अहीरके घरमें जबरन् भर आवें। बस, और ज्यादा तीन-पाँच हमलोग कुछ नहीं जानते।' इस विचित्र घटनापर गाँवभर आश्चर्य कर रहा था। केवल मुखियाको और बुढ़ियाको मालूम था कि यह सब काम परसरामका है। मुखियाने थानेमें इस घटनाकी रिपोर्ट लिखायी और यह भी लिखाया कि 'कल पञ्चमीके दिन सुबहको जब चम्पाके फेरे पड़ेंगे, उस समय कन्यादान देने खुद परसरामके आनेकी

उम्मीद है; क्योंकि वह अभीतक खुद नहीं आया है। पाँच मिनटके लिये गाँवमें आनेका उसने वचन दिया है। चाहे धरती इधरकी उधर हो जाय, पर परसरामका वचन खाली नहीं जा सकता। चौथकी रातमें ही मिस्टर यंग साहब अपने तीस मरकट सिपाहियोंके साथ सेखूपुरमें आ धमके। उन सबोंने घोड़ोंके सौदागरोंका भेष बनाया था। मुखियाके दरवाजेपर वे लोग ठहर गये। गाँववालोंने जाना कि घोड़ेके सौदागर लोग मेलेको जा रहे हैं। मुखिया और चौकीदारके सिवा असली भेद कोई नहीं जानता था।

(३)

पञ्चमीका सबेरा हुआ। परसरामने ज्यों ही घोड़ेपर चढ़ना चाहा, त्यों ही छींक हुई। एक साथीका नाम था रहीम। बी० ए० पास था। पेशावरका रहनेवाला था। घोड़ेकी सवारीमें और निशाना लगानेमें एक ही था। रहीमने परसरामको रोकते हुए कहा—'कहाँ जा रहे हैं आप?'

परसराम—सेखूपुर,चम्पाका कन्यादान देने। तुमको तो सब हाल मालूम करा दिया था। रोको मत। रुक नहीं सकता।

रहीम—छींक हुई!

परसराम—मुसलमान होकर भी छींकको मानते हो!

रहीम—बात यह है कि यंग साहब अपने तीस सिपाहियोंके साथ इधर ही गये हैं। उन लोगोंने सौदागरोंका स्वाँग बनाया है। मगर मेरी नजरको धोखा नहीं दे सकते।

परसराम—घूमने दो। क्या करेगा यंग साहब?

रहीम—मालूम होता है कि मूर्ख बुढ़ियाने आपके मिलनेका हाल अपने गाँवमें बयान कर दिया है। पुलिसको आपके जानेका हाल मालूम हो गया है, तभी यंग साहबने मौका देखकर चढ़ाई की है।

परसराम—सम्भव है, तुम्हारा अनुमान सही हो। लेकिन इसी

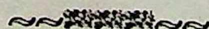
साहबने कहा—‘हमारे नौ आदमी काम आ चुके हैं। मगर डाकूका एक ही आदमी मरा।’

एक सिपाही था राजपूत। उसने आगे बढ़कर कहा—‘मिट्टी गिराकर डाकूको दाब देना चाहिये।’ आवाजका निशाना साधकर परसरामने गोली छोड़ी। राजपूत बेचारा मरकर गिर गया। साहबने कहा—‘वेल परसराम! टुम बाहर आ जाओ। अम टुमपर बहोत खुश हैं। टुम एक बहादुर और बातका ढनी आडमी है। अम टुमारे निशानेपर खुश हूँ।’

परसरामने जवाब दिया—‘मैं अपना वचन पूरा कर चुका। एक लोटा पानीसे उऋण हो गया। अब मरनेका डर नहीं है।’

साहब—‘अगर टुम डाका डालना बंड करनेकी कसम खाओ तो अम टुमको वायसरायसे कहकर छुड़ा लेगा। इतमिनान करो और बाहर आओ। टुम भी बातका ढनी, अम भी बातका ढनी। आजसे टुम हमारा डोस्त हुआ।’

परसराम बाहर निकल आये और आत्मसमर्पण कर दिये। यंग साहबने उनको गिरफ्तार कर लिया और आगरा ले गये। कुछ दिनों मुकदमा चला। मगर यंग साहबने परसरामको साफ बरी करा दिया। परसरामने समझ लिया—अच्छा उद्‌देश्य होनेपर भी आखिर डकैती थी बहुत बुरी चीज, उसका समर्थन हो ही नहीं सकता। अतएव उस कामको छोड़ दिया। वे साधु हो गये और अपने साथियोंको नेकीका जीवन व्यतीत करनेका उपदेश दिया। परसरामने हरद्वारमें जाकर पाँच सालतक घोर तपस्या की और सन् १९३५ ई० में गङ्गाजीकी बीच धारामें खड़े-खड़े शरीर त्याग दिया। परसरामने यह दिखला दिया कि विपत्तिको देखकर भी वचनका पालन करना चाहिये।



बलिदान

(१)

पुराना जमाना था। एक महान् त्यागी तरुणने अपनी घोर साधनाके बाद सोलह सालकी आयुमें भक्तिका एम्० ए० पास किया। इनका नाम था उग्र तपस्वी दत्तात्रेय।

उस समय अवधमें राजा मूढ़ मान्धाता राज्य करते थे। वे काली माताके उपासक थे। पुजारी, उपासक और भक्त मैट्रिक, बी० ए० और एम्० ए० की तरह अलग-अलग हैं। भक्तको महात्मा भी कहते हैं। एक रात सपनेमें राजाने काली माताका दर्शन किया। माताने कहा—'बलिदान!' माताजीके कहनेका लक्ष्य था—'अपने अहंकारका बलिदान कर मेरी भक्ति प्राप्त कर।' परंतु राजा उस लक्ष्यपर नहीं पहुँचा। उसने जाकर निश्चय किया कि कालीकी मूर्तिके सामने एक आदमीका बलिदान देना चाहिये; नहीं तो राज्यका कुशल नहीं। सच है, कोई किसीका लक्ष्य नहीं देखता।

राजाको भय और चिन्तासे रातभर नींद नहीं आयी। प्रातः मन्त्रीको ताकीद कर दी कि राज्यभरमें यह मुनादी करवा दो कि जो आदमी काली माताका बलिदान बनेगा, उसके घरवालोंको राजा एक लाख रुपये देगा। इस पवित्र कामके लिये किसी नवयुवकको अग्रसर होना चाहिये। इस नोटिसको सालभर हो गया। कोई न आया। एक दिन राजाने फिर वही सपना देखा और सुना वही—'बलिदान' का शब्द!

अबकी बार राजाने ऐलान कराया कि अगर कोई नवयुवक अपनी जानकी मिथ्या लालसा नहीं छोड़ सकता तो न सही, परंतु

एक मानव-बलि देना राजा-प्रजाके हितके लिये जरूरी नजर आ रहा है। अगर कोई किसी बूढ़े, अंधे या पागलको इस पवित्र कामके लिये राजी कर लेगा तो वह एक लाख रुपया पुरस्कार पायेगा।

(२)

इस दूसरे विज्ञापनको भी एक साल हो गया। बहुतेरे बूढ़ोंसे उनके घरवालोंने कहा कि आखिर दो-एक सालमें स्वयं मर ही जाओगे, क्यों न घरवालोंको एक लाख दे मरो! परंतु अपने हाथ अपनी मौत बुलानेपर कोई राजी न हुआ। एक रात राजाने फिर वही सपना देखा और फिर वही हुक्म सुना। राजा बहुत घबराने लगा।

राजाने निश्चय किया कि अब खुद उसे किसी आदमीकी खोज करनी चाहिये। शिकार खेलनेके बहाने राजा दिन-दिनभर इधर-उधर घूमने लगा। सातवें दिन एक जंगलमें एक आमके वृक्षके नीचे राजाने भक्त दत्तात्रेयजीको चुपचाप बैठे देखा। राजाने सोचा—जैसे भी हो, इसे ले चलना चाहिये। झूठ बोलूँगा, जालसाजी करूँगा, लेकिन इस लड़केका बलिदान जरूर दूँगा। राजाके लिये दफा ४२० है नहीं। मालूम होता है कि यह लड़का किसी बातपर माता-पितासे रूठकर यहाँ आ बैठा है। पचास रुपये मासिककी नौकरीका लोभ ही इसे मेरे महलतक पहुँचानेका साहस रखता है। सत्ययुगमें भी कलियुग रहता है, कलियुगमें भी सत्ययुग रहता है। चारोंमें चारों हैं। भक्तके पास राजाने घोड़ा खड़ा कर दिया और उससे बातचीत शुरू की।

राजा—तुम कहाँ रहते हो?

भक्त—शिव ही सब है।

राजा—मैं पूछता हूँ कि तुम किस गाँवमें रहते हो?

भक्त—महावीर-सा वीर महावीर ही है।

राजा—तुम्हारा नाम क्या है?

भक्त—अन्तिम गुरु दो हैं—एक कच्चा बाबा, एक सच्चा बाबा।

राजा—मैं यह पूछता हूँ कि तुम्हारा नाम क्या है?

भक्त—जो सत्य होगा, वही सुन्दर होगा और वही शिव होगा।

राजा सोचने लगा—'मैं खेतकी कहता हूँ और यह खलिहानकी सुनता है। मैं पटने जाता हूँ तो यह आगरा जाता है। वजह क्या है? यह खूबसूरत लड़का, जो एक गरीब राजकुमारकी तरह बैठा है, अंटकी संट क्यों बहकता है? क्या सनकी है? पागल तो नहीं हो गया है? भयसे भेद खुलता है।'

राजा—तुम चोरी करके भागे हो। मैं राजा हूँ। मैंने तुमको गिरफ्तार किया।

भक्त—नेमका राजा रामचन्द्र, प्रेमका राजा कृष्णचन्द्र।

राजा—मेरे पास 'तुम्हारा' वारंट है।

भक्त—शिव ही सब है, सब ही शिव है।

राजा—चुप रहो बदमाश।

भक्त—माया बन रही है परमात्मा और परमात्मा बन रहा है जीवात्मा। हाय, अब कैसे 'कल्याण' होगा!

इतना कहकर वह फूट-फूटकर रोने लगा। उसके नयनाभिराम नयनोंसे मोती-मालाओंका निर्माण होने लगा।

राजाने निश्चय किया लड़का पागल है।

घोड़ेसे उतरकर राजाने उस लड़केको अपने पीछे घोड़ेपर बैठाकर अपने महलकी राह ली।

(३)

राजधानीके बाहर, पूर्वमें काली माताके मन्दिरपर आज भारी भीड़ हो रही है। चार पण्डित प्रातःकालसे हवन कर रहे हैं।

दोपहरीके एक बजे एक सुन्दर लड़केका बलिदान होगा। लड़के-लड़की, नर-नारी सभी आ रहे हैं। पुलिस सबको गोल चक्करमें बिठा रही है।

पुलिस कहती थी—'शोर मत करो, राजा साहब पधार रहे हैं।'

ठीक बारह बजे एक बंद पालकी आयी। हाथमें नंगी तलवार लिये राजा साहब उतरे, हाथ-पैर बँधा एक लड़का भी पालकीसे उतारा गया।

दोनों आकर हवनके पास काली माताके सामने खड़े हो गये। लोगोंने उन दोनोंको देखा। मास्टर दत्तात्रेयको देख सब चकित और सम्मोहित हो गये। ब्रह्मा, विष्णु और शंकर—तीनोंके आशीर्वादसे भक्तजीका जन्म हुआ था। माताएँ कहने लगीं—'अगर मेरा बच्चा होता तो राजाकी दाढ़ीमें दियासलाई लगा देती। हाय! बेचारेकी माँ मर गयी।' पिताओंने कहा—'अगर मेरा पुत्र होता तो चाहे मेरा तन, बदन तोले-तोले उड़ जाता, लेकिन जीते-जी इसपर आँच न आने देता।' रमणियोंने कहा—'कितना मनोरञ्जक पति होता।'

जब पूर्णाहुतिकी घंटी बजी, तब एक बजा। राजाने तीखे स्वरमें भक्तसे कहा—'कुछ खाओगे?'

भक्त—अज्ञानको खाऊँगा।

राजा—कुछ पिओगे?

भक्त—द्वैतको पी लूँगा।

राजा—किसीको देखोगे?

भक्त—सबको देखूँगा।

राजा—किसीसे कुछ कहोगे?

भक्त—शिवसे कहूँगा कि तू ही सब है।

राजा—मैं कौन?

भक्त—सत्यं शिवं सुन्दरम्।

राजा—तू कौन?

भक्त—सत्यं शिवं सुन्दरम्।

राजा—(तलवार दिखलाकर) यह क्या है?

भक्त—सत्यं शिवं सुन्दरम्।

राजा—(काली-मूर्तिके प्रति इशारा कर) वह कौन?

भक्त—सत्यं शिवं सुन्दरम्।

राजा—तुम्हारा बलिदान दिया जायगा।

भक्त—सत्यं शिवं सुन्दरम्।

राजा—(तलवार उठाकर) जय काली!

पब्लिकमें हाहाकार मच गया। कोई रोने लगा, कोई भागने लगा, कोई आँखें बंद करके बैठ गया, कोई चिल्लाने लगा, कोई मूर्च्छित हो गया और कोई राजाको गालियाँ देने लगा।

(४)

यह क्या?

राजा और भक्तके बीच स्वयं काली माता प्रकट हो गयीं। मारे भयके राजाकी तलवार जमीनपर गिर पड़ी।

देवी—क्यों मूर्ख! यह क्या कर रहा था?

राजा—माताजीका आज्ञा-पालन जैसे हो सका, यही पागल लड़का तीन सालकी तलाशके बाद मिल सका। क्षमा करो माताजी!

देवी—पागल लड़का?

राजा—जी हाँ।

देवी—कौन है पागल?

राजा—यह लड़का।

देवी—ये पागल हैं या तू पागल है?

राजा—माताजी!

देवी—परमात्मारूपी बादशाहके ये एक शाहज़ादे हैं। इनके

बचानेके लिये मुझे बड़ी दूरसे आना पड़ा। अरे मूर्ख! प्रथम यह बता कि मैंने तुझसे अहंकारका बलिदान चाहा था या किसी मेरे बच्चेको अकारण मार डालनेको कहा था?

राजा—समझा नहीं माताजी!

देवी—और मारनेके लिये मिला वह कि जिसे स्वयं मौत नहीं मार सकती!

राजा—समझा नहीं माताजी!

देवी—जो सबको 'शिव' देखता है; किसकी मजाल जो उसपर हाथ उठा सके।

राजा—समझा नहीं माताजी!

देवी—यदि मैं न आती और तू तलवार चला देता तो यह तलवार तेरा ही मस्तक काट डालती।

राजा—समझा नहीं माताजी!

देवी—राजा! तू नहीं पहचानता कि यही महात्मा दत्तात्रेय हैं, जिनको भगवान् और जगद्गुरु-जैसे दो पद प्राप्त हैं।

राजा—समझा नहीं माताजी!

देवी—इनके चरणकमलपर अपना सिर रख दो। आजसे इनको अपना गुरु मानना और इनके उपदेशसे जीवनका संचालन करना।

राजा—(भक्तके चरण पकड़) क्षमा करो हे क्षमानिधान!

देवी अन्तर्धान हो गयी। अमीरको उठाकर फकीरने छातीसे लगा लिया। पहले तो प्रजा दुःखके आँसू बहा रही थी, अब वह सुखके आँसू बहाने लगी।



शत्रुताको मारो, शत्रुको नहीं

(१)

श्यामगढ़का राजा श्यामसिंह चाहता था—नामवरी; परंतु कीर्तिकारी गुण उसमें नहीं थे। रामगढ़का राजा रामसिंह था गुणवान्, उसका नाम देशके कोने-कोनेमें फैलने लगा। श्यामसिंहको ईर्ष्या हुई। उसने अकारण रामसिंहपर चढ़ाई कर दी।

रामसिंहने विचार किया—'यदि मैं सामना करता हूँ तो बेकार हजारों आदमी मारे जायँगे। उनके बच्चे अनाथ हो जायँगे। उनकी स्त्रियाँ मुझे शाप देंगी। युद्ध नाना व्याधियोंकी जड़ है।' रामसिंह रातको महलसे निकल गया और एक पहाड़की गुफामें जा बैठा। श्यामसिंहने बिना मार-काटके महलपर अधिकार कर लिया।

प्रातः गद्दीपर बैठकर श्यामसिंहने दरबार किया और यह घोषणा की—'जो कोई रामसिंहको पकड़ लायेगा, उसे एक लाख रुपया इनाम दिया जायगा।'

(२)

जिस जंगलमें राजा रामसिंह छिपे थे, वहाँ दो भाई लकड़ी काटने गये। वे लोग लकड़ी बेचकर ही जीवन-निर्वाह किया करते थे। बड़े भाईका नाम था जंगली, छोटेका नाम था मंगली। जाति चमार। अत्यन्त गरीब। घरमें दोनोंकी औरतें थीं। एक-एक बच्चा भी। कठिन कलेसमें जान थी। जिस गुफामें राजा साहब छिपे बैठे थे, उसीके पासवाले वृक्षपर वे दोनों भाई लकड़ी काटने लगे।

मंगली बोला—'धत् तेरी तकदीरकी! कहीं अभागा रामसिंह ही मिल जाता तो पकड़ ले जाता। एक लाख मिलते। एक लाख

मिलते तो सात पुस्तका दलिद्दर दूर हो जाता।'

बड़ा भाई जंगली बोला—'क्या बकता है? ऐसे दयावान्, धरमवान् और मिहरवान् राजाके लिये तेरे ऐसे कमीने विचार? लानत है। तुझे देखकर नरक भी नाक सिकोड़ेगा।'

मंगलीने कहा—'मिल जाता अभागा तो मैं तो ले जाता। आखिर कोई तो ले ही जायगा। मैं ही क्यों न इनाम मारूँ?'

जंगलीने उत्तर दिया—'अगर हमारा राजा हमें मिल भी जाय तो भी हम उन्हें वहाँ न ले जायँ। रुपया कितने दिन चलेगा? लेकिन हमारी बदनामी एक अमर कहानी बन जायगी। राम राम! ऐसी बात सोचना भी पाप है। न मालूम श्यामसिंह क्या बरताव उनके साथ करे? मार ही डाले तो?'

मंगली—कल मरता हो तो आज मर जाय। मेरे लिये उसने क्या किया? श्यामसिंह उसे पातालसे खोज निकालेगा। तुम्हारे छोड़ देनेसे वह बच नहीं जायगा। मुझीको मिल जाता—फूटी तकदीरवाला! मार देता एक लाखका मैदान! टूट जाती गलेकी फाँसी!

जंगली—नहीं-नहीं! राम राम! शिव शिव! भगवान् उनकी रक्षा करें। वे फिर हमारे राजा होंगे।

(३)

यह बातचीत सुनकर राजा रामसिंह गुफासे बाहर निकलकर उस पेड़के पास चले आये। उनको देखकर दोनों भाई अचकचा गये।

राजा—मुझे ले चलो।

जंगली—नहीं महाराज! यह लड़का पागल है। इसकी बातोंपर कान मत दीजिये।

राजा—अगर मेरी जानके द्वारा किसीकी भलाई हो जाय तो

क्या हर्ज है? ***पर उपकार सरिस नहिं धर्मा!*** मुझे ले चलो।

मंगली गुमसुम खड़ा राजाको देखने लगा।

जंगली—हम अपनी जान देकर आपकी आन बचायेंगे महाराज!

राजा—अच्छा तो मैं खुद ही श्यामसिंहके पास जाता हूँ। कह दूँगा कि इस लकड़हारेने मुझे गुफामें छिपा दिया था।

जंगली हँसा। बोला—'यह काम भी आप न कर सकेंगे राजा साहब! जो दूसरेकी भलाई किया करता है, उससे दूसरेकी बुराई हो ही नहीं सकती।'

बातचीत सुनकर चार राहगीर वहाँ आ पहुँचे। उन्होंने राजाको पहचान लिया और पकड़ लिया। जंगली भी रोता हुआ पीछे-पीछे चला। लकड़ी लेकर मंगली घर चला गया। मंगलीने मनमें कहा—'धत् तेरी तकदीरकी। जालमें आकर चिड़िया उड़ गयी।'

(४)

श्यामसिंह—शाबाश! तुम लोग पकड़ लाये! किसने पकड़ा?

एक बोला—मैंने।

दूसरा बोला—मैंने।

तीसरा बोला—मैंने।

चौथा बोला—मैंने।

श्यामसिंह—सच कहो किसने पकड़ा?

चारों—सच कहते हैं, हमने।

रामसिंह—आप बिलकुल सच बात जानना चाहते हैं?

श्यामसिंह—जी हाँ!

रामसिंह—मुझे इन चारोंमेंसे किसीने नहीं पकड़ा।

श्यामसिंह—फिर किसने पकड़ा?

रामसिंह—वह जो कोनेमें कुल्हाड़ी लिये लकड़हारा खड़ा है, उसने पकड़ा है। उसे इनामका एक लाख दीजिये।

श्यामसिंहने इशारेसे जंगलीको अपने पास बुलाया।

श्यामसिंह—सच कहो। मामला क्या है?

जंगलीने आरम्भसे अन्ततक सारा किस्सा सच्चा बयान कर दिया।

श्यामसिंहने कहा—'इन चारोंपर सौ-सौ जूते फटकार कर दरबारसे बाहर निकाल दिया जाय।'

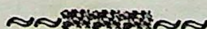
सिपाही लोग झपटे। चारोंको मार-पीटकर बाहर कर दिया। एक लाख रुपये देकर जंगलीको भी विदा कर दिया गया।

(५)

श्यामसिंहने गद्दीपरसे कूदकर रामसिंहको छातीसे लगा लिया। फिर बोले—'जैसा सुना था, वैसे ही आप निकले। परोपकारके लिये अपनी जान भी खतरेमें डाल दी! मैं सात जन्म भी आपकी चरणरजकी समानता नहीं कर सकता। अपना राज्य कीजिये, अपना महल लीजिये और खजाना सँभालिये। मैंने आपकी परीक्षा कर ली। आप नामवरीके योग्य हैं।'

तीन दिन मिहमानी खाकर राजा श्यामसिंह अपनी सेना लेकर अपने देशको चला गया।

गद्दीपर बैठकर राजा रामसिंहने दरबारमें कहा—'अपने शत्रुको मत मारो। उसमें भी जीवात्मा है। किसी उपायसे शत्रुताको मार डालो। बस, शत्रुको मानो जीत लिया।'



मूर्तिमान् परोपकार

वह आपादमस्तक गंदा आदमी था। मैली धोती और फटा हुआ कुर्ता उसका परिधान था। सिरपर कपड़ेकी एक पुरानी गोल टोपी लगाता था, जिसमें एक सुराख भी था। उसकी कमर कमान बन गयी थी। बाल चाँदी और मुँह वेदान्ती। चेहरेपर झुर्रियाँ थीं। दो भूरी आँखें गहरे गड्ढोंमेंसे झाँकती थीं। उसके शरीरकी हड्डियाँ और नसें उभरी हुई थीं। कहीं-कहीं मांस सिकुड़कर लटक गया था।

स्कूलके सामनेवाली झोपड़ीमें उसने एक छोटी-सी दूकान बना रखी थी, जहाँसे बच्चोंको स्याही, कलम, पेंसिल, कापी आदि छोटी-छोटी चीजें प्राप्त हो जाया करती थीं। उसी दूकानसे उसका जीवन-निर्वाह होता था। सुना जाता था कि उसके पास कुछ खेती भी थी और वह एक गाँवमें रहता था। उससे लड़कोंने खेती छीन ली थी और उसे घरसे निकाल दिया था। उसने भी कभी अच्छे दिन देखे थे। अब तो वह किसी प्रकार जीवनके दिन पूरे कर रहा था।

सभ्यताके नाते मैं उस गंदे और गरीब आदमीको 'बाबाजी' कहा करता था। वास्तवमें मुझे उसकी सूरतसे, चाल-ढालसे और उसकी बोल-चालसे अत्यन्त घृणा थी। हाथमें एक चिलम लिये, जिसमें एक छोटा-सा चिमटा बँधा रहता था, जब शामको वह धीरे-धीरे चलता हुआ मेरे पास स्कूलमें आता था, तब मैं अपने मनमें उसे कई दर्जन गालियाँ दिया करता था।

कई बार मैं ऐसी हरकतें करता जिससे वह स्कूलके चबूतरेपर बैठकर चिलम पीना और खाँसना छोड़ दे। मैं नहीं चाहता था कि वह मेरे पास आया करे। जब वह आकर बैठता, तब मैं उठकर अलहदा टहलने लगता था। जब वह मुझसे बातें करने लगता, तब मैं कोई किताब पढ़ने लगता। मगर मेरी इस बेजारीका कोई असर उसपर नहीं पड़ता था। जहाँ शाम हुई, वह चिलम लेकर आ बैठता! कभी-कभी कहता—

'मास्टर साहबने रोटी तो बना ली होगी?'

'हाँ बना ली।'

'सब्जी क्या बनायी थी?'

'आलू बनाये थे।'

'थोड़ी सब्जी बची भी होगी!'

इस प्रकार वह रोजाना मुझसे कुछ सब्जी या दाल ले लिया करता था। फिर एक काले रूमालमें बँधे दो बाजरेके टिक्कड़ निकालता और बैठकर खाने लगता। यह देखकर मेरा जी जल उठता। गंदे कपड़े, गंदी रोटियाँ और खानेका गंदा तरीका। वह यह तो जानता ही न था कि सफाई क्या वस्तु होती है। उस बूढ़ेने मेरा जीवन दूभर कर डाला था। जितना खून रोजाना बनता था, उससे दूना जल जाता था। उसे स्कूलमें आनेसे कैसे रोकूँ, यही चिन्ता मुझे दिन-रात सताती रहती थी। अन्तमें मैंने एक तरकीब सोच निकाली। शामको जब वह स्कूलके चबूतरेपर आकर बैठा, तब मैं गरजकर बोला—

'बाबाजी! कल शामको जब तुम आये थे तब मेजपर दस रुपयेका एक नोट रखा था।'

'ना महाराज! मुझे तो पता नहीं!' हाथ जोड़कर रुला-से स्वरमें उसने उत्तर दिया।

'इस प्रकार हाथ जोड़कर गिड़गिड़ानेसे तुम यह साबित नहीं कर सकते कि तुमने नोट नहीं उठाया। मैं तुम-सरीखे नीच लोगोंको खूब पहचानता हूँ।

'पहचानते होंगे महाराज! भगवान् जाने जो मैंने वह नोट देखा भी हो।'

'बगला भगतोंवाली बातें छोड़ो। अगर तुम बुरे न होते तो तुम्हारे लड़के तुमको घरसे क्यों निकालते? कमीना कहींका—भाग जा यहाँसे। खबरदार जो फिर कभी इधरको रुख किया!'

वह मेरी तरफ देखता हुआ, चिलम उठाकर चल दिया। मैंने उसका चेहरा देखा। वहाँपर दिल हिला देनेवाला एक दुःखी दिखलायी पड़ा। उसका दिल टूट गया था। उसकी आँखें कह रही थीं—'मैं गरीब हूँ, असहाय हूँ, निर्बल हूँ; परंतु इतना नीच नहीं हूँ कि किसीकी चोरी करूँ।'

× × × ×

उस दिनसे उसका आना-जाना बंद हो गया। बोल-चालका तो प्रश्न ही नहीं उठता। इस तरहसे मेरे दिन आरामसे कटने लगे। दिल-दिमागकी बेचैनी खतम हो गयी। मैं प्रसन्न रहने लगा।

कुछ दिनों बाद वर्षा-ऋतु शुरू हो गयी। प्रायः प्रतिदिन रातको वर्षा होने लगी। खैर, कोई बात नहीं। वर्षा-ऋतुमें वर्षा तो होगी ही; परंतु एक रातको तो वर्षाने सीमा तोड़ दी। संध्या-समयसे जो वर्षा शुरू हुई तो थमनेका नाम ही न लिया। मैंने जल्दीसे भोजन बनाया और स्कूलके बरामदेमें चारपाईपर लेट गया। नींद नहीं आ रही थी। तीन घंटे बीत गये, परंतु वर्षा समाप्त न हुई। न मालूम क्यों आज पहली बार मुझे भय लगा। वर्षाके शोरके अतिरिक्त कोई आवाज नहीं आ रही थी। उस स्कूलसे गाँव आधा मील दूर था। न तो किसी आदमीकी आवाज सुनायी

पड़ती थी और न कोई रोशनी ही दृष्टिगोचर हो रही थी। कुत्ते भी नहीं भौंक रहे थे। चारों तरफ घोर सन्नाटा छाया हुआ था। झींगुरोंकी झाँझ बज रही थी। मेढकोंका तबला बज रहा था और बरसात झमाझम नाच रही थी। केवल बाबाजीकी झोपड़ी अवश्य सामने थी, परंतु शायद आज वह भी सबेरे सो गया था। खाँसनेकी भी आवाज नहीं आ रही थी।

मुझे जो भयका वातावरण घेरे हुए था, वह अकारण न था। थोड़ी देर बाद जब मैं लघुशंकाके लिये उठकर चारपाईसे नीचे उतरा तो मेरी चीख निकल गयी। मैं उछलकर चारपाईपर जा बैठा। मेरा हृदय जोर-जोरसे धक्-धक् करने लगा। चारपाईके नीचे एक साँप लेटा हुआ था। मैंने तकियेके नीचेसे दियासलाई निकाली। वह सरदी खा गयी थी। कई तीलियाँ रगड़ीं, परंतु वह जली नहीं।

लाचारीसे मैंने जोरसे दूसरी चीख मारी। शायद बाबाजीने सुनी हो। परंतु वह बेचारा मेरी सहायताके लिये क्यों आने लगा?

मरता क्या न करता? मैंने भगवान्‌का नाम लिया। हिम्मत बाँधकर चारपाईके सिरहानेसे उतरकर कमरेमें गया। बक्समेंसे नयी दियासलाई निकाली और लालटेन जलायी। एक हाथमें लाठी और दूसरे हाथमें लालटेन लेकर बाहर निकला, परंतु साँप गायब था। मैं लालटेन फर्शपर रखकर चारपाईपर बैठ गया, परंतु भयके कारण हृदय काँप रहा था। उधर वर्षाने और भी जोर पकड़ रखा था। क्षण-क्षणमें बिजली चमक रही थी। बादल भी खूब गरज रहे थे। अन्तमें सोच-विचारकर शर्मको एक तरफ रखकर लालटेन उठायी और मैं लाठी लिये हुए बाबाजीकी झोपड़ीके सामने जा खड़ा हुआ। मैंने धीरेसे पुकारा—'बाबाजी!'

परंतु कोई उत्तर न मिला।

'बाबाजी-बाबाजी' लगातार जोरसे मैंने दूसरी और तीसरी आवाज लगायी। शायद बाबाजी गहरी नींदमें सो रहे थे। फिर मुझे यह भी विचार आया कि कहीं किसी साँपने उसे काट न खाया हो। चटाईपर जमीनपर सोता था बेचारा। परंतु यह असम्भव था, क्योंकि वह एक माना हुआ सँपेरा था। तब मैंने जोरसे झोपड़ीका दरवाजा खटखटाया। अंदरसे आवाज आयी—

'कौन है?'

'मैं हूँ।'

'कौन? मास्टरजी।'

'हाँ।'

'क्या बात है?' बाहर आकर वह बोला।

'मुझे वहाँ डर लगता है। तुम वहाँ चलो।'

'कहाँ चलूँ?'

'स्कूलमें।'

'क्यों?'

'अभी-अभी एक भयानक साँप मेरी चारपाईके नीचे लेटा था।'

'न महाराज! मैं स्कूलमें नहीं जाता। मैं तो चोर हूँ।'

'बाबाजी! वह बात और ही थी, मुझे मुसीबतसे बचाओ।'

'चले जाओ यहाँसे!' उसने गरजकर कहा।

मैं निराश होकर लौट चला। मुझे बाबाजीपर बड़ा क्रोध आ रहा था। सहसा वह बोला—'मास्टरजी! जरा सुनो तो।'

मैंने सोचा कि दयालु भगवान्‌ने उसके दिलमें दया भर दी। मैं लौटकर उसके पास जा खड़ा हुआ। वह बोला—

'कितना बड़ा साँप था?'

'होगा कोई दो गज लंबा!'

'हूँ' कहकर उसने मुँह फेर लिया।

'हूँ' क्या बाबाजी?' मैंने नम्रतासे पूछा।

'कुछ नहीं। कौड़िया नाग होगा। उसका काटा पानी नहीं माँगता।'

'तो फिर? मैंने गिड़गिड़ाकर कहा।

'तो फिर मैं क्या करूँ! तुम जाओ।' उसकी जीभ लड़खड़ा रही थी।

मुझे बड़ी निराशा हुई। उसने वापस बुलाकर मेरा भय और भी बढ़ा दिया था। मैंने सोचा कि इस बूढ़ेका शरीर जितना गंदा है, उससे भी ज्यादा इसका मन गंदा है। मेरे जीमें आया कि इस स्वार्थी बूढ़ेकी गरदन मरोड़ दूँ।

मैं फिर मुड़ा। उसका चेहरा देखा तो उसके आँसू बह रहे थे। मैं पश्चात्तापकी आगमें जलने लगा। वह कठोर हृदय न था—भावुक हृदय था। मैंने पास जाकर कहा—'मुझे क्षमा करो, बाबाजी! मैंने चोरीकी बात झूठ कही थी।' मेरी आवाज आँसुओंमें डूब गयी। 'रोते हो मास्टरजी! भला, इसमें तुम्हारा क्या अपराध? जब मेरे लड़कोंने ही मुझे घरसे निकाल दिया, तब दूसरोंकी क्या शिकायत? अपना-अपना भाग्य है बाबू!' उसने चुपकेसे अपने आँसू पोछ लिये।

'नहीं बाबाजी! मैं बड़ा पापी हूँ।' मेरी हिचकी बँध गयी।

'पागल हो गये हो मास्टरजी!'

वह बातें करता हुआ मेरे साथ स्कूलमें आ गया। काफी देरतक बैठा-बैठा मुझे साँपोंके किस्से सुनाता रहा। अन्तमें वह बोला—

'कितना ही जहरीला साँप हो मैं उसे हाथसे पकड़ सकता हूँ।'

'तो साँप काटेका मन्त्र भी है आपके पास बाबाजी!'

'मन्त्र होता तो है मास्टरजी! परंतु मुझे मालूम नहीं। मैं तो मुँहसे चूसकर जहर बाहर निकाल देता हूँ।'

'मुहँसे? और जहर तुमपर असर नहीं करता?'

बाबाजीने हँसकर उत्तर दिया—असर अवश्य करता है बाबू! परंतु उसके लिये मेरे पास एक दवा है। झोपड़ीमें एक काली-सी बोतल रखी है। उसमें एक बूटीका अर्क भरा है। जहर चूसकर उसे थूक देता हूँ और उस अर्कसे तुरंत दो कुल्ले कर डालता हूँ फिर कोई असर नहीं होता। जब मैं किसीका जहर खींचने जाता हूँ तब वह काली बोतल साथ लेता जाता हूँ।

बातें करते-ही-करते बाबाजी वहीं फर्सपर लेट गये और तुरंत सो गये। उनकी नाक बजने लगी। परंतु मुझे नींद कहाँ। चारपाईपर करवटें बदलते-बदलते काफी देर हो गयी। मुझे प्यास लग आयी। पानीका घड़ा कमरेके अन्दर था। साँपके डरसे एक बार फिर कलेजा काँप गया। लेकिन यह सोचकर साहस बाँधा कि बाबाजी तो पास ही हैं। मैं पानी पीनेके लिये उठा। चारपाईसे उतरकर जूता पहिना। लेकिन यह क्या! पैरपर मानो किसीने जलता हुआ अँगारा रख दिया। उसी साँपने कहींसे आकर मेरे पैरमें जोरसे डँस लिया था। मेरी आत्माने कहा—'तुमने चोरीका मिथ्या दोष लगाकर बाबाजीका दिल बेकार दुखाया था, उसका बदला महामायाने ले लिया। दिल दुखानेकी सजा बड़ी भयानक होती है, क्योंकि दिलमें दिलदारका निवास होता है।'

इसके बाद मैं बेहोश हो गया।

जब मैं होशमें आया तो धूप फैल रही थी। आकाश साफ था। मेरे आस-पास स्कूली बच्चोंका और कुछ किसानोंका जमाव था। स्कूलके आस-पास जिनके खेत थे, वे किसान लोग

जमा थे। मेरा सिर घूम रहा था। निर्बलताके कारण उठा नहीं जाता था। पैरमें अब भी कुछ जलन हो रही थी। मैंने किसानोंसे पूछा—'बाबाजी कहाँ हैं?'

'बाबाजी भगवान्‌के पास पहुँच गये! एक किसान बोला।

'कैसे क्या हुआ? मैंने अचकचाकर पूछा।'

वही किसान कहने लगा—'सुबह जब लड़के स्कूल आ रहे थे तो उनकी लाश झोपड़ीके पास पड़ी मिली। जहरसे सारा शरीर नीला पड़ गया था। जीभ सूजकर बाहर निकल आयी थी। मालूम होता है कि रातमें आपको साँपने काटा था। बाबाजीने जहर खींच लिया। परंतु दवाकी बोतल झोपड़ीमें थी। वहाँतक जाते-जाते जहर अपना काम कर गया।'

'बेशक मुझे साँपने काटा था। लेकिन उनको चाहिये था कि बोतल ले आकर जहर खींचते।'—मैंने कहा।

'तबतक आप मर भी जाते मास्टरजी!'—वही किसान बोला।

मैं फिर बेहोश हो गया।

× × × ×

मैंने बाबाजीकी लाश जलायी। उस स्थानपर पक्का चबूतरा बनवा दिया। वहाँ एक पत्थर लगवा दिया, जिसपर लिखा था—

'मूर्तिमान् परोपकारी बाबाजी'

जिनको मैंने झूठी चोरी लगायी थी। पर जिन्होंने मेरे पैरका जहर खींचकर अपने प्राण दे दिये। इसे बलिदानकी पराकाष्ठा कह सकते हैं। परमात्मा उनकी आत्माको शान्ति दें। किसीका शरीर गंदा देखकर यह नहीं सोचना चाहिये कि उसका हृदय भी गंदा होगा मास्टरजी!



शुभचिन्तनका प्रभाव

सेठ गंगासरनजी काशीमें रहते थे। वे भगवान् शंकरजीके सच्चे भक्त थे। सोमवती अमावस्याका प्रातःकाल था। मणिकर्णिकाघाटपर अनेक नर-नारी, साधु-संन्यासी स्नान कर रहे थे। 'जय गङ्गे', 'जय शंकर' और 'जय सूर्यदेव' के नारे लगाये जा रहे थे। भक्त गंगासरनजी भी स्नान कर रहे थे। तबतक अलवरके मन्दिरपरसे कोई गङ्गामें कूदा और डुबकियाँ खाने लगा। किसीकी हिम्मत न पड़ी, जो उस डूबनेवालेको बचानेकी कोशिश करता, क्योंकि कभी-कभी डूबनेवाला अपने बचानेवालेको इस तरह पकड़ता है कि दोनों डूब मरते हैं; परंतु सेठजीका हृदय करुणासे भर गया। वे तैरना भी जानते थे। चार हाथ मारे और डूबनेवालेको जा थामा। किनारेपर लाकर देखा तो वह सेठजीका ही मुनीम नन्दलाल था। पेटसे पानी निकालनेके बाद जब नन्दलालको होशमें देखा, तब भक्तजीने कहा—

'मुनीमजी! आपको किसने गङ्गाजीमें फेंका था?'

'किसीने नहीं।'

'तो क्या किसीका धक्का खाकर आप गिरे थे?'

'नहीं तो।'

'फिर क्या बात थी?'

'मैं स्वयं ही आत्महत्या करना चाहता था।'

'वह क्यों?'

'मैंने आपके पाँच हजार रुपये सट्टेमें बरबाद कर दिये हैं। मैंने सोचा कि आप मुझे गबनके अभियोगमें गिरफ्तार कराकर जेलमें

बंद करा देंगे। अपनी बदनामीसे बचनेके लिये मैंने मर जाना उत्तम समझा था।'

एक शर्तपर मैं तुम्हारा अपराध क्षमा कर सकता हूँ।

'वह शर्त क्या है?'

प्रतिज्ञा करो कि आजसे किसी प्रकारका कोई जुआ नहीं खेलोगे—सट्टा नहीं करोगे।

प्रतिज्ञा करता हूँ और जगद्गुरु शंकर भगवान्की शपथ खाता हूँ।

'जाओ, माफ किया। पाँच हजारकी रकम मेरे नाम घरेलू खर्चमें डाल देना।'

'परंतु अब आप मुझे अपने यहाँ मुनीम नहीं रखेंगे?'

'रखूँगा क्यों नहीं। भूल हो जाना स्वाभाविक है। फिर तुम नवयुवक हो। लोभमें आकर भूल कर बैठे। नन्दलाल! मैं तुम्हें अपना छोटा भाई मानता हूँ। चिन्ता मत करो।'

मुनीमने अपने दयालु मालिकके चरणोंमें सिर रख दिया।

× × × ×

अगले वर्ष सेठ गंगासरनजीको कपड़ेके व्यापारमें एक लाखका मुनाफा हुआ। मुनीम नन्दलालको फिर लोभके भूतने घेरा। अबकी बार सेठजीके प्राण लेनेकी तरकीब सोची जाने लगी। उसने सोचा—यदि सेठजी बीचमें ही उठ जायँ तो विधवा सेठानी और बालक शंकरलाल मेरे ही भरोसे रह जायँगे। वे दोनों क्या जानें कि 'मिती काटा और तत्काल धन' किसे कहते हैं। बुद्धिमानीसे भरे हीले-हवालेसे यह एक लाख मेरी तिजोरीमें जा पहुँचेगा। किसीको कुछ खबर भी न होगी, अन्तमें घाटा दिखला दूँगा। व्यापारमें लाभ ही नहीं होता, घाटा भी तो होता है।

संध्याका समय था। नन्दलाल अपने घरसे एक गिलास दूध संखिया डालकर सेठके पास ले गया और बोला—'दस दिन हुए

मेरी गायने बच्चा दिया था। आजसे दूध लेना शुरू किया जायगा। आपकी बहूने कहा—'पहिला गिलास मालिकको पिला आओ। तब हमलोग दूधका उपयोग करेंगे।'

सेठजी बोले—'गिलास मेजपर रखकर घर चले जाओ।' मैं भी भोजन करने जा रहा हूँ। सोते समय तुम्हारा लाया हुआ यह दूध मैं अवश्य पी लूँगा।'

मेजपर वह विषाक्त दूध रखकर दुष्ट मुनीम चला गया।

भोजन करके सेठजी आये तो देखा गिलास खाली पड़ा है। सारा दूध पड़ोसकी पालतू बिल्ली पी गयी। सुबह सुना कि पड़ोसीकी बिल्ली मर गयी। वह क्यों मरी, कैसे मरी—इस बातकी छानबीन नहीं की गयी। पशुके मरने-जीनेकी चिन्ता मनुष्य नहीं करता। दूकानपर सेठको गद्दीपर बैठा देख मुनीमको महान् आश्चर्य हुआ, परंतु वह बोला कुछ नहीं।

रातको स्वप्नमें सेठजीको भगवान् शंकरजीके दर्शन हुए। भगवान् कह रहे थे—'तुमने जिस दुष्ट मुनीमको पाँच हजारके गबनके मामलेमें क्षमा कर दिया था, उसने दूधमें संखिया मिलाकर तुमको समाप्त करनेका षड्यन्त्र रचा था। मैंने प्रेरणा करके बिल्ली भेजी थी और तुम्हारे प्राण बचाये थे। उसी विषसे पड़ोसीकी बिल्ली मरी थी।'

सेठने उसी समय जाकर सेठानीको अपना सपना सुनाया। सुनकर बेचारी सेठानी सहम गयी। फिर सँभलकर बोली—'जब वह तुम्हारा ऐसा अशुभचिन्तक है, तब उसे निकाल बाहर करो, कोई दूसरा ईमानदार मुनीम रख लो।'

'मैं अपने शुभचिन्तनके द्वारा उसका अशुभचिन्तन नष्ट कर डालूँगा। सेठने दृढ़ताके साथ कहा।'

'यह कैसे हो सकता है?' सेठानीने आश्चर्यचकित होकर प्रश्न किया।

'मैं अपने मनमें उसके प्रति वैरभावना नहीं रखूँगा, बल्कि प्रेम-भावनाको बढ़ाता रहूँगा।'

'इससे क्या होगा?'

'जब हम किसीके प्रति शत्रुताके विचार रखते हैं, तब वह भावना उसके पास जाकर उसकी शत्रुताको और भी बढ़ा देती है। दिलको दिलसे राह होती है।'

'मैं नहीं समझी।'

एक दृष्टान्त सुनाता हूँ, तब तुम समझ जाओगी। एक बार बादशाह अकबर प्रधान मन्त्री बीरबलके साथ सैर करने शहरसे बाहर निकले। सामने एक लकड़हारा आता दिखायी पड़ा। बादशाहने पूछा—'यह लकड़हारा मेरे प्रति कैसा विचार रखता है?' बीरबलने उत्तर दिया—'जैसे विचार आप उसके प्रति रखेंगे, वैसे ही वह भी रखेगा; क्योंकि दिलकी दिलसे राह है।' बादशाह एक पेड़पर चढ़ गये और कहने लगे—'साला लकड़हारा मेरे जंगलकी लकड़ियाँ बिना इजाजत चुराकर काट लाता है और अपना खर्च चलाता है। कल इसे फाँसी देंगे।' तबतक वह लकड़हारा पास आ पहुँचा। बीरबलने कहा—'लकड़हारे! तुमने सुना या नहीं कि आज बादशाह अकबर मर गया।' लकड़हारेने लकड़ीका गट्ठा फेंक दिया और वह नाचते हुए बोला—'बड़ा अच्छा हुआ। बड़ा बदमाश बादशाह था। मीना बाजारमें एक राजपूतनीको बुरी नजरसे देखा तो उसने छातीमें कटार घुसेड़ दिया होता, परंतु 'माता' कहकर क्षमा माँगी, तब प्राण बचे थे। मैं तो प्रसाद बाँटूँगा। खूब मरा!' बादशाहने बीरबलका सिद्धान्त मान लिया।

'फिर क्या हुआ?' सेठानीकी उत्सुकता बढ़ी।

उसी समय एक वृद्धा घास लिये आती दिखलायी पड़ी। बादशाह पेड़पर ही छिपा बैठा रहा; क्योंकि वह शुभचिन्तन और

अशुभचिन्तनका प्रभाव देखना चाहता था। अशुभचिन्तनका प्रभाव वह देख चुका था। अबकी बार शुभचिन्तनका प्रभाव देखनेके लिये बादशाहने कहा—'बीरबल! वह देखो, बेचारी वृद्धा आ रही है। कमर झुक गयी है, मुँहमें दाँत भी न होंगे। लाठीके सहारे चल रही है। अपनी गायके लिये थोड़ी घास छील लायी है। दस रुपये माहवारी इसकी पेंशन आजसे बाँध दो—वजीरे आजम!' जब बुढ़िया पास आयी, तब बीरबल कहने लगे—'बूढ़ी माई! तुमने सुना कि आज आधी रातके समय बादशाह अकबरको कालानाग सूँघ गया। सुबह कबर भी लग गयी।' बुढ़ियाने घास पटक दिया और रो-रोकर कहने लगी—'गजब हो गया, राम राम, बड़ा बुरा हुआ। ऐसा दयालु बादशाह अब कहाँ मिलेगा। हिंदू-मुसलमान दोनों उसकी दो आँखें थीं। बीरबल प्रधान मन्त्री, मानसिंह सेनापति और टोडरमल खजाना-मन्त्री। फिर गोवध कतई बंद। मजाल क्या कि कोई किसी गायकी पूँछका एक बाल भी खींच ले! भगवान्, तुम मेरे प्राण ले लेते, बादशाहको न मारते।'

प्रातः स्नानके बाद भक्तजी विश्वनाथ-मन्दिरमें गये। पूजन करके हाथ जोड़कर बोले—'अन्तर्यामी भोलानाथ! मुझे अपने मुनीमके पतनका आन्तरिक दुःख है, परंतु मेरे मनमें उसके प्रति जरा भी द्वेष देखें तो बेशक मुझे दण्ड दें। भगवन्! आप मेरे मुनीमका चित्त शुद्ध कर दीजिये। यदि उसकी लोभ-भावना दूर न हुई तो मेरी भक्तिका क्या फल हुआ? काम, क्रोध, लोभ—ये ही तीन मानवके प्रबलतम शत्रु हैं। मुझे अपने जीवनका भय नहीं है; क्योंकि—

'तुम रहते जिसके मन भीतर उसको परवाह नहीं होती,
जंगलमें कितने काँटे हैं, पैरोंमें कितने छाले हैं।'
मैं तो आत्मसमर्पण करके निश्चिन्त हो गया हूँ।

× × × ×

साँझको एक सँपेरा मुनीमजीके घरके सामनेसे निकला।

मुनीमने उसे बुलाकर कहा—'तुम्हारे पास कोई ऐसा साँप है, जिसके विषदाँत तोड़े न गये हों?'

'जी हाँ, इसी पेटीमें मौजूद है। कल ही पकड़ा था।'

'तुम उसे बेच दो। ये लो पाँच रुपये।'

सँपेरेने वह विषधर फणिधर एक मिट्टीकी हाँड़ीमें बंद कर दिया और मुँहपर कपड़ा बाँध दिया।

जब रातके दस बजे, तब हाँड़ी लेकर नन्दलाल सेठजीके मकानपर पहुँचा। जिस कमरेमें सेठजी सोते थे, उसकी खिड़कीका एक शीशा टूटा हुआ था। खिड़कीके नीचे ही भक्तजीका पलंग रहता था। नन्दलालने उसी खिड़कीके द्वारा वह काला साँप अन्दर फेंक दिया, जो सेठजीकी रजाईके ऊपर जा गिरा। हँसता हुआ नन्दलाल लौट गया।

प्रातः जब सेठजी रजाईसे बाहर निकले तब सेठानी भी वहीं खड़ी थी। उसी रजाईमेंसे एक काला साँप निकला और पलंगपरसे नीचे उतर गया। सेठानी चीख पड़ी। नौकरको बुलाने लगी।

'नौकरको क्यों पुकारती हो' सेठजी बोले।

'इस साँपको मरवाऊँगी। आपको काटा तो नहीं!' सेठानीने कहा।

'मेरी प्रेमपरीक्षा लेनेके लिये भगवान् भोलानाथने अपने गलेका हार भेजा था। रातभर साथ सोता रहा। कभी मेरा हाथ पड़ गया तो कभी पैर भी पड़ गया; परंतु काटता तो रातभरमें सौ बार काट सकता था।' सेठने कहा।

तबतक लाठी लेकर नौकर आ गया। सेठजी बोले—'हीरा! लाठी रख दो। एक कटोरा दूध लाओ। दूध पिलाकर सर्पदेवताको जाने दो, जहाँ वे जाना चाहें। खबरदार, मारना मत।'

और वह इसी घरमें रहने लगे। सेठानीने व्यंग्य किया।

कोई परवा नहीं, रहने दो। भला, साँप कहाँ नहीं रहते। साँपपर ही पृथ्वी टिकी है!' सेठजीने कहा।

रातको सेठजीने सपनेमें फिर भोलानाथको बैलपर चढ़े हुए मुस्कराते देखा। भगवान्‌ने मुनीमवाली सर्प-क्रिया बयान कर दी। सेठने कहा—कुछ हो, अपने शुभचिन्तनके द्वारा मुनीमके अशुभ-चिन्तनको नष्ट करना है। आपका आशीर्वाद है, इस परीक्षामें पास हो ही जाऊँगा। आप भी इसमें मेरी सहायता करें।

× × × ×

अपने दोनों अशुभचिन्तन विफल देख मुनीम नन्दलालने तीसरी स्कीम सोची। उसने दो नामी चोरोंसे दोस्ती गाँठी। एक दिन आधी रातके समय नन्दलाल उन दोनों चोरोंको लेकर सेठजीके मकानके पीछे जा पहुँचा। सेंध लगवाकर तीनों भीतर घुसे। सेठजीकी तिजोरी जिस कमरेमें रहती थी, उस कमरेको मुनीम जानता था। ज्यों ही मुनीम उस कमरेमें पहुँचा, उसने सामने काशीके कोतवाल भगवान् काल भैरवको त्रिशूल लिये खजानेके पहरेपर खड़ा देखा; भय खाकर भागना चाहा तो भगवान्‌ने उसे पकड़ लिया। दो तमाचे लगाकर कहा— 'कमीने, जिसने तुझे आत्महत्यासे बचाया, उसके प्रति बदमाशी-पर-बदमाशी करता ही चला जा रहा है। आज तुझे खतम करूँगा।'

दोनों चोर भाग गये। मुनीमने भगवान् भूतनाथके चरण पकड़ लिये और गिड़गिड़ाने लगा—आज मेरा सारा अशुभचिन्तन मर गया। मैं अभी सेठजीसे माफी माँगता हूँ। अपने सुधारके लिये यह एक मौका दीजिये।

वही हुआ। मुनीमने जाकर सेठजीको जगाया और उनके चरण पकड़कर अपने तीनों अपराधोंको स्वीकार करते हुए क्षमा माँगी। सेठजीने हँसकर मुनीमको छातीसे लगा लिया और कहा—'मेरे शुभचिन्तनकी विजय हुई।'

और वास्तवमें नास्तिक मुनीम ईमानदार आस्तिक बन गया था।



कहानीका असर

कई साल पहलेकी बात है। मि० सप्रू इटावामें डिप्टी कलक्टर बनकर आये। एक दिन एक विचित्र घटना घटी। सप्रूजी भोजन करके पलंगपर लेटे हुए थे। रातके दस बजेका समय था। मनोहर नाई चरणसेवा कर रहा था।

सप्रू—मनोहर! कोई कहानी सुनाओ।

मनोहर—आपको मैं क्या सुना सकता हूँ। आपने हजारों किताबें पढ़ी हैं और लाखों कहानियाँ सुनी हैं। आप रोज जो मुकदमे करते हैं, वे सब कहानियाँ ही तो हैं। आप कुछ कहें और मैं सुनूँ।

स०—नहीं मनोहर! तुम्हीं कोई कहानी कहो।

म०—आप नहीं मानते तो सुनिये। बीच-बीचमें 'हूँ' जरूर कहते जायँ। नहीं तो आप सो जायँगे और मैं बकता रहूँगा।

स०—अच्छा।

म०—अरबमें एक बादशाह था। एक रातको दासीने छतपर बादशाहका पलंग बिछाया। गरमीके दिन थे। छतपर केवड़ेका छिड़काव किया गया था।

स०—हूँ।

म०—सोनेका पलंग था, रेशमकी निवारसे भरा गया था, कालीन बिछा था, उसपर गद्दा बिछा था; फिर एक कालीन बिछा था; उसपर सफेद चद्दर बिछी थी। आमने-सामने, अगल-बगल चार तकिये रखे थे और फूलोंसे सेज सजाकर दासी उस पलंगकी शोभा एकटक देख रही थी।

स०—हूँ।

म०—दासीके मनमें विचार आया कि पाँच मिनट इस पलंगपर

लेट लेना चाहिये। मैं भी तो देखूँ कि कैसा लगता है! मन होता है शैतान! दासी बादशाहके पलंगपर लेट गयी।

स०—अच्छा। फिर?

म०—दासी थी बेचारी दिनभरकी थकी-माँदी! ऊपरसे लगी ठंडी हवा, नीचेसे उठी फूलोंकी गमक! तीन मिनट भी नहीं बीते, दासी टपसे सो गयी।

स०—अरे! फिर क्या हुआ, शामत आयी होगी?

म०—एक घंटेके बाद भोजन करके बादशाह सलामत आराम करने आये। पूरनमासीकी चाँदनी थी ही, बादशाहने तुरंत ज़ान लिया कि पलंगपर दासी सो रही है।

स०—गजब हो गया!

म०—बादशाह दासीको जगाया। जमीनपर खड़ी होकर मारे डरके दासी थर-थर काँपने लगी। हाथ जोड़कर चरण पकड़ लिये और फूट-फूटकर रोने लगी। बादशाहने कहा कि 'इस कसूरकी बिलकुल माफी नहीं हो सकती। हलकी सजा दी जायगी।'

स०—अच्छा। फिर?

म०—बादशाहने बेगम साहेबाको बुलाया और सब माजरा कह सुनाया। इसके बाद बादशाहने बेगमसे कहा कि 'आप ही इस दासीकी सजा तजबीज करें, क्योंकि इसने आपका ही विशेष अपराध किया है।'

स०—ठीक। फिर?

म०—बेगम साहेबाने कहा कि इसने साठ मिनट पलंगपर व्यतीत किये हैं इसलिये साठ बेंतकी सजा दी जाती है।

स०—बहुत सख्त सजा दे दी।

म०—रुतबा पा जानेपर आदमी कसाई हो जाता है।

स०—हाँ, हूँ, आगे चलो।

म०—सजा सुनकर बादशाहके भी होश उड़ गये। बादशाहने

सोचा कि अगर किसी आदमीने बेंत लगाये तो यह साफ मर जायगी।

स०—हूँ।

म०—तबतक बेगम साहेबाने खुद ही कहा कि बेंत मैं ही लगाऊँगी। खूँटीपरसे चमड़ेका बेंत उठाकर बेगम साहेबाने चार-पाँच हाथ करारे जमा दिये। बेचारी दासी रोती हुई गिर पड़ी। उसके बाद बेगम सााहेबा थक गयीं। औरतकी जात मुलायम होती ही है।

स०—हूँ।

म०—बादशाह एक-दो-तीन-चार-पाँच कहकर गिनती गिनने लगे। तीस बेंततक दासी जोर-जोरसे रोती रही, परंतु उसके बाद दासीकी मति पलट गयी। तीससे साठतक दासी खूब हँसती रही।

स०—सो क्यों?

म०—धीरज रखिये। सब बातें आप-ही-आप खुलती जायँगी।

स०—अच्छा, हाँ।

म०—सजा समाप्त होनेपर बादशाहने दासीसे पूछा कि 'तू पहले रोयी क्यों और पीछे हँसी क्यों?' दासीने कहा कि 'चोटके कारण रोयी थी, परंतु जब यह समझमें आया कि मैंने एक घंटा पलंगपर बिताया तब तो साठ बेंत लगे और बादशाह सलामत रातभर सोते हैं सो इनकी न मालूम क्या दशा होगी। पलंगकी सजासे बेगम साहेबा भी न बचेंगी। आप दोनोंपर अनगिनती बेंत पड़ेंगे। अतः यह सोचकर मैं हँसी कि सजा देनेवालोंको अपनी सजाकी खबर ही नहीं है। जिस तरहसे पलंगपर मुझे सोती देख आप क्रोधित हुए उसी तरह आपको पलंगपर सोता देख खुदा गुस्सा होता है। मेरे हँसनेका यही कारण है।' इतना सुनते ही बादशाहकी बुद्धि बदल गयी। बादशाहने ताज फेंक दिया, इनाम फेंक दिया, जामा फेंक दिया और जूते फेंककर फकीरी कफनी पहिन ली। रामचन्द्रजी दिनको वनकी ओर चले थे, बादशाह ठीक आधी रातको वनगामी हो गया।

स०—वाह वाह! The duty is the beauty,

म०—अँग्रजीमें क्या मुझे गाली देने लगे?

स०—नहीं मनोहर! तुमने बहुत अच्छा किस्सा कहा, किन्तु अब हमको भी इस पलंगसे उतरना चाहिये।

'Duty is beauty' इतना कहकर वे पलंगसे उतर पड़े और पृथ्वीपर कम्बल बिछाकर लेट गये।

× × × ×

शहरभरमें खबर फैल गयी कि फर्स्ट क्लास मजिस्ट्रेट मिस्टर सप्रू ५५०) मासिकपर लात मारकर फकीर हो गये। बँगलेके द्वारपर एक इमलीके वृक्षके नीचे, एक कम्बलपर डिप्टी कलक्टर फकीरी-वेषमें बैठे हैं।

बात-की-बातमें अँग्रेज कलक्टर साहब, सुपरिंटेंडेंट पुलिस, जिलेके शेष तीन डिप्टी कलक्टर और कोतवाल साहब घटना-स्थलपर जा पहुँचे।

कलक्टर—वेल मिस्टर सप्रू! टुमको क्या हो गया? टुम कलेक्टरीके वास्ते नामजद हो गया है। टुमने यह इसटीपा क्यों भेजा? अम टुमारा इसटीपा मंजूर करना नहीं माँगटा!

स०—अभीतक सरकारी नौकरी की, अब मालिककी नौकरी करूँगा।

कलक्टर—पिकीरी करेगा पिकीरी? चौबीस घंटेमें पाँच घंटा सरकारी काम करो और बाकी वक्त में पिकीरी करो। टुम बी राम राम करना, अम बी राम राम करेगा।

स०—सजा देनेवाले नहीं जानते हैं कि उनके लिये किस सजाकी तजबीज हो रही है। इस बातने मेरा कलेजा काट दिया।

तहसील भरथनाके डिप्टी कलक्टरने कलक्टरसे कहा—'हुजूर! ***'ज्ञानकी बात कृपानकी धारा'***— यानी तलवारकी तरह बात भी काट करती है। मेरा मँझला भाई जिला बाँदामें तहसीलदार था। एक रोज उसने देखा कि एक काले साँपने एक मेढक पकड़ा

और निगल गया। भाईने सोचा कि इसी तरह एक दिन मौतका साँप, मुझ मेढकको गटक जायगा। उसी वक्त वह साधू हो गया। आजतक पता नहीं कि कहाँ है।'

कलक्टर—मिस्टर सप्रू! अगर मेरी बातपर टुम नजर नहीं डालता तो न सही। वह देखो टुमारी खूबसूरत और तालीमयाफ्ता बीबी फाटकपर हाथ रखे रो रही है। टुमारा छोटा-सा बच्चा भी रो रहा है। टुमारे बिना टुमारे मेमसाहबका क्या हाल होगा? टुमारा बच्चा कैसे तालीम पायेगा। बच्चेको पढ़ा-लिखा दो, तब पिकीर होना, तब हम बी पिकीर होगा।

स०—नहीं हुजूर! भूखी-प्यासी, थकी-माँदी पब्लिकका पैसा वेतनके रूपमें लेकर मैंने जो पलंगबाजी की है, उसकी सजा मुझे जरूर मिलेगी। अब मैं किसी दूसरेका इन्साफ नहीं करूँगा—खुद अपना इन्साफ करूँगा। जो अपना इन्साफ नहीं करता, वह दूसरोंका क्या इन्साफ करेगा?

सबने समझाया, पर सब व्यर्थ! लाचार होकर कलक्टर साहबने इस्तीफा ले लिया। मनोहर नाई छाती पीट-पीटकर श्रीमती सप्रूके चरणोंमें लोट रहा था और कह रहा था कि 'मैंने नहीं जाना था कि कहानीमें भी असर होता है, नहीं तो यह कहानी नहीं कहता।'

× × × ×

शहर इटावासे एक मील दक्षिणमें यमुनाजी हैं। एक पक्के घाटपर भूतपूर्व डिप्टी कलक्टर श्रीयुत् सप्रूजी बैठे हैं। फटी कमली है और एक मोटा सोटा है। यमुनामें खड़े होकर आप घाटपर सोटा खटखटाया करते थे और कभी-कभी कहते थे—

'लगा रहा खटका!'

'खटकेका खटका—खटपट करता रह!!'

'मत मिटना—खटखटा!!!'

दस बजेके करीब झोली लेकर आप भिक्षा लेने शहरमें जाते थे। पब्लिक उनको पहचानती तो थी ही। सभी चाहते थे कि आज हमारे द्वारपर आयें। रोटी लेते थे—रोटियोंको लेकर उस झोलीको यमुनाजीमें डुबाते थे। तदनन्तर उस झोलीको एक इमलीकी डालीमें लटका देते थे। चार बजेतक झोली लटकती रहती थी फिर कुछ आप खाते और बाकी बंदरोंमें खिला देते थे। फटी कमलीके सिवा कोई वस्त्र पास नहीं रखते थे। इस प्रकार इटावाके एक डिप्टी कलक्टरने इटावामें ही बारह साल घोर तपस्या की।

× × × ×

'खट-खट' करते रहनेसे पब्लिक उनको 'खटखटा बाबा' कहने लगी। एक बार खटखटा बाबाने भण्डारा किया। घीकी कमी पड़ गयी। कड़ाही चढ़ी हुई थी, शहर दूर था। आपने एक चेलासे कहा कि दो कलसा यमुना-जल लाकर कड़ाहीमें छोड़ दो। वैसा ही किया गया। यमुनाका जल घी बन गया। पूड़ी सेंकी गयी। एक बार कोई सिद्ध यमुनाजीकी बीच धारामें पद्मासन लगाये बैठा हुआ चला जा रहा था। खटखटा बाबाको देखकर कहा कि 'पानी पिला जाओ।' बाबाजी भी लोटामें जल लेकर यमुनामें स्थलकी भाँति चलने लगे। पानी पीकर महात्माने कहा—'तुम भी सिद्ध हो गये।'

× × × ×

खटखटा बाबाके समाधि-स्थानपर अब अनेक इमारतें बन गयी हैं। समाधिका मन्दिर और विद्यापीठकी इमारत दर्शनीय है। सहस्रों प्राचीन पुस्तकोंका अपूर्व संग्रह किया गया है। सालमें एक बार मेला लगता है। भारतके विद्वानों, योगियों और पण्डितोंको निमन्त्रण देकर बुलाया जाता है। खूब व्याख्यान होते हैं। खटखटा बाबाकी समाधि इटावाका तीर्थस्थान है। इटावा जिलेका बच्चा-बच्चा खटखटा बाबाके नामसे परिचित है।



७४॥

(१)

बादशाह—महाराज बीरबल! हम और आप सात महीनेसे चित्तौड़में लड़ाई कर रहे हैं। अनगिनत बंदे बेकसूर मारे गये। क्यों मारे गये?

बीरबल—बादशाह सलामत! अमीरोंकी मूर्खताएँ गरीबोंको भोगनी पड़ती हैं। खास रामायणमें लिखा है—

और करइ अपराध कोउ और पाव फल भोग।

बादशाह—कितने आदमी मारे गये इस लड़ाईमें?

बीरबल—आदमी और औरतको तो मैं जानता नहीं! दिल्ली और चित्तौड़की इस भयानक लड़ाईमें इतने हिंदू मारे गये हैं कि उनके जनेऊ ७४॥ मन हुए हैं! यह एक महाभारत आपने कराया क्यों? मेरा भी रोकना न मानकर आपने बेकार इस नर-संहारको निमन्त्रण ही क्यों दिया?

बादशाह—७४॥ मन जनेऊ? अजी पंडीजी! आप फरमाते क्या हैं?

बीरबल—वह देखिये, आमकी शाखामें तराजू झूल रहा है। नंबरी मनका बाट भी वहाँ रखा है और सब जनेऊ भी वहाँ रखे हैं। चलिये और अपनी करतूतका मुलाहजा कीजिये।

बादशाह—७४॥ मन जनेऊ? या अल्लाह! या रामचन्दर! मगर पंडीजी! आपने जनेऊ क्यों इकट्ठे कराये?

बीरबल—ब्राह्मण और क्षत्रिय-पलटनें जनेऊधारी हैं। अहीर और जाटोंकी पलटनें जनेऊहीन हैं। ७४॥ मन जनेऊ आधे

मृतकोंके समझने चाहिये। उनके दूने कर दीजिये—उतने आदमी आपने इसलिये मरवा डाले कि आज आप दिल्लीके सिंहासनपर विराजमान हैं। अत्याचार या जुल्म इसीको कहते हैं। मैं जानता था कि आप युद्धमें मरने और घायल होनेवालोंकी गिनती पूछा करते हैं। इसलिये यहाँकी सूक्ष्म मर्दुमशुमारी, सूतके तीन डोरोंकी शकलमें देख लीजिये।

(२)

बादशाह—या अल्लाह! या राजा रामचन्दर! मुझे वहाँ मत ले चलो पंडीजी माराज! मुझे बड़ा अफसोस होगा! माफ करो खुदाके वास्ते!

बीरबल—खुदा माफ करेगा? अगर ऐसा करे तो खुद खुदा ही खुद जाय! चित्तौड़के रेगिस्तानको आपने खूनकी झील बना दिया है। यह दृश्य खुदाको क्या इस वक्त दिखायी नहीं देता होगा? माफ करनेयोग्य आपका यह कसूर है?

बादशाह—अरे, चित्तौड़के किलेमें यकायक आग लग गयी है! लोगोंको भेजो, आग बुझा दें!

बीरबल—लोग कहाँ, लोग तो केवल दो शेष रहे हैं। एक आप, एक मैं। चलिये, हम दोनों आग बुझायें। मगर शत्रुके महलमें आग है, आपके महलमें तो है नहीं, फिर आपको खुशी मनाना चाहिये या रोना चाहिये?

बादशाह—दुश्मन कोई नहीं है, सभी दोस्त हैं। सभी कलेजेसे लगा लेनेके काबिल हैं। माराज! किसी तरहसे भी इस आगमें पानी डलवा दीजिये।

बीरबल—यह आग वह नहीं है कि जिसको पानी खा सके। यह आग वह है कि जिसमें पानी मिट्टीके तेलकी तरह जलता है। आप फिकर न करें। जिसे आप आग समझते हैं, वह आग नहीं है।

बादशाह—आग नहीं है? आग-है-आग! आग-ही-आग है! किलेको खाने आयी है। उदयसिंहके इस किलेको बचाओ बीरबल!

बीरबल—बादशाह सलामत! जरा होशमें आइये। जिसको आप आग समझ रहे हैं, वह जौहरकी आग है!

बादशाह—हैं? जौहर हो रहा है! महारानी सती हो रही हैं!

(३)

बीरबल—जी गरीबपरवर! केवल एक महारानी ही नहीं, एक हजार पतिव्रताओंकी जमात भी जल रही है।

बादशाह—दौड़कर चलो! सतियोंको जलनेसे जल्दी बचाओ! वरना मुगल खानदान आगे चलकर बरबाद हो जायगा।

बीरबल—उस भावी बरबादीकी शिला आज आपने खुद ही रख दी। चित्तौड़के आस-पास अगणित शव सड़ रहे हैं, रक्तने झीलका रूप धारण किया है और महलमें सतियाँ जल रही हैं। तवारिख क्या कहेगी! कलमवाले क्या लिखेंगे!

बादशाह—या अल्लाह! या श्रीरामचन्दर! बिलकुल बेकसूर था महाराना! चित्तौड़को एक स्वतन्त्र राज्य मान लेनेमें मेरी कोई हानि नहीं थी।

बीरबल—फिर क्यों अपना मुँह काला किया? साथ रहनेके कारण मेरा भी मुँह काला हुआ या नहीं?

बादशाह—बैठ जाओ! मेरे पैर काँपते हैं। इरादा होता है कि मैं भी इसी आगमें कूद पड़ूँ! मगर बैठना कैसा? जल्दी चलो। अभी आग जलायी ही गयी है। हिंदू माता अभी जली नहीं होंगी।

बीरबल—हिंदू माताके पास हम और आप पहुँच ही नहीं सकते। जब उनके पति मारे गये तब सारा रनिवास सती हो जायगा। उनको इस कामसे रोकनेवाला न बीरबल है और न

बादशाह ही। अगर ब्रह्माजी चाहें तो वे भी नहीं रोक सकते।

बादशाह—तो क्या हुआ! करीबसे चलकर दर्शन करेंगे।

बीरबल—इस वक्त आपकी मति मारी गयी है। आपके सिरपर ७४॥ मनके दूनेका पाप आ बैठा है। आगे चलकर यह संख्या एक कसम बन जायगी। अगर कोई अपनी चिट्ठीपर ७४॥ का अङ्क डालेगा तो वह आन हो जायगी। जो कोई उस पत्रको पढ़ेगा उसको ७४॥×२ पापका कुछ भाग मिलेगा।

(४)

बादशाह सलामत! मैंने आपके इस युद्धका पाप चुराकर पत्र पढ़नेवालोंपर डाल दिया। प्रथम तो किलेका ताला अंदरसे बंद है; दूसरी बात यह कि शत्रुके किलेमें आपको जाना नहीं चाहिये।

बादशाह—वाह पंडीजी माराजा! वाह! इस बोझसे आपने मुझे हलका कर दिया, इसका निहायत मैं मशकूर रहूँगा। मुझे मजबूरन् चित्तौड़से लड़ना पड़ा।

बीरबल—किसके कहनेसे यह लड़ाई हुई?

बादशाह—एक फकीरके कहनेसे।

बीरबल—क्या कहा था उसने?

बादशाह—तबकी बात है, जब आप वजीर नहीं थे। दिल्लीमें एक ऐसा फकीर आया कि जो सोना बनाता था। जब उससे मैंने सोना बनाना पूछा तो वह मुकर गया। मैंने उसे आजीवन कारागारका दण्ड दिया। मगर खाना ले जानेके लिये मैं खुद खानसामाके स्वाँग करता था। अच्छा खाना ले जाता था। उस फकीरकी सेवा जिस्मानी भी किया करता था। जो चीज माँगता था, चुपचाप दे आता था। अफीम खानेकी लत थी उसे। मैं अठन्नीभर अफीम शाम-की-शाम थमा आता था। छः महीनेमें

बाबाजी बड़े खुश! एक दिन मैं रोना-सा होकर चुपचाप बैठ गया। पूछनेपर कह दिया कि लड़कीकी शादी आ गयी है और घरमें चूहे डंड पेल रहे हैं। फकीरने कहा—रुपयेके लिये अफसोस करना बेकार है। मैं तुझे सेरभर सोना बना दूँगा।

बीरबल—उस फकीरका नाम क्या था?

बादशाह—नाम तो मैं नहीं जानता, था बड़ा औलिया।

बीरबल—आपने एक इस्लामी अमर फकीरको बिना कारण कैद कर लिया था। एक औलियाको आपने जेलमें ठूँसा था। यों कहिये कि आप जुल्मके आदी हैं। मुझपर लोग इसीलिये नाराज रहते हैं कि मैं कलमतोड़ जवाब देता हूँ। पीछे चाहे स्याह हो या सफेद हो।

बीरबल—हाँ, फिर सोना बना?

बादशाह—आप भिगोकर मारनेमें लासानी हैं माराज! इसलिये मैं आपके सब कसूर माफ किये बैठा हूँ।

बादशाह—फकीरने कहा—तीन चीजें ले आ—(१) चमड़ेकी धौंकनी और कोयला, (२) ताँबा और (३) पारा! आगपर ताँबा गलाया और पारेका दिल मिलाया, वही सोना बना। मगर इस्म आजमके बिना पारा अपना दिल नहीं देता है! वह आगपर उड़ जाता है। वह कुछ नहीं बनता हुआ सब कुछमें समा जाता है! खैर साहब, खुदा आपका भला करे? मैं रातमें तीनों चीजें ले गया। उसने ताँबा गलाया और पारेका दिल मिलाया। सोना तो क्या चीज! कुन्दन बन गया पंडीजी!

बीरबल—आपने सोना बनाना सीख लिया है?

बादशाह—हाँ, जिसे आप 'अकबरी' मुहर समझते हैं, वह रसायनका सोना है! जौहरी लोग उसे कीमती सोना कहते हैं, यह सोना मैं खुद बनाता हूँ।

बीरबल—उस फकीरने और क्या बात कही थी?

बादशाह—उसने कहा था कि देखो, मैंने मन्त्रसहित तरकीब तुमको बतला दी है। तुम किसीको यह इल्म मत बतलाना। बादशाहने मुझे इसलिये कैद किया है कि मैंने उसे तरकीब बतानेसे इन्कार कर दिया। अगर बादशाह खुशामद करता तो बतला देता। चार चीजें अगर बादशाह पा जाय तो वह दिल्लीके तख्तपर हमेशा कायम रह सकता है।

बीरबल—कौन चार चीजें?

बादशाह—(१) संतकी मिहरबानी, (२) सतीकी मिहरबानी (३) रसाइन और (४) चित्तौड़का किला।

बीरबल--पाया क्या-क्या?

बादशाह—कबीर साहब संतकी मिहरबानी पा ली है। रसाइन पा ली है। चित्तौड़का किला पा लिया है। सिर्फ सतीकी मिहरबानी बाकी रही।

(६)

बीरबल—यही बाकी, बाकी तीनोंकी बाकी निकाल देगी।

बादशाह—क्या फरमाया पंडीजी?

बीरबल—जिस दिल्लीके सिंहासनपर युधिष्ठिर और पृथ्वीराज अमर राजा न बन सके, उसपर आप कैसे बनेंगे?

बादशाह—एक सतीकी मिहरबानी बाकी है! अगर मेरे चारों काम पूरे हो जायँ तो फिर मैं देखता हूँ कि मुझे कौन मारता है।

बीरबल—वह देखिये, संग्रामभूमिके बीचोबीच एक सतीदाह होने जा रहा है। चिता जल उठी है, सती परिक्रमा कर रही है। आपको चाहिये कि सतीकी मिहरबानी प्राप्त करें। चलिये, वहाँ चलिये।

दोनों सतीके सामने जा पहुँचे। दोनोंने सतीको प्रणाम किया।

बादशाहने हाथ जोड़कर सतीसे बातचीत की—

बादशाह—आपका मकान कहाँ है?

सती—डोंगरपुर।

बादशाह—डोंगरपुरकी जागीर चित्तौड़से काफी दूर है। आप यहाँ क्यों आयीं?

सती—मेरे पति लड़ाईमें मारे गये हैं।

बादशाह—आपके पतिका नाम?

सती—राजकुमार श्रीमानसिंह।

बादशाह—आपका नाम?

सती—लाजवन्ती।

बादशाह—मगर डोंगरपुरके राजा मेरे दोस्त हैं।

लाजवन्ती—परंतु उनके राजकुमार आपके दुश्मन थे।

बादशाह—आपने मुझे पहचान लिया?

सती—अपने शत्रु और मित्रको पशु-पक्षीतक पहचानते हैं।

बादशाह—आपका विवाह कब हुआ था?

सती—अभी नहीं। मँगनी हुई थी!

बादशाह—जिसके साथ विवाह नहीं हुआ था, उसके साथ जल जाना नादानी है। आप मेरे साथ दिल्ली चलें! मैं आपकी पूजा करूँगा। आप जिसके साथ चाहेंगी, अपना विवाह कर सकेंगी! डोंगरपुरकी मालगुजारी माफ कर दी।

(७)

सती—पागल है, तू हिंदू सतीका महत्त्व नहीं समझता, तू इसे नादानी बता रहा है, यही तेरी बड़ी नादानी है। हिंदू स्त्री एक बार जिसे मनमें पति मान लेती है, वही उसका पति है। यह भारतीय पातिव्रतकी शान है कि मँगनीवाली लड़की अपने भावी पतिके साथ सती हो रही है। मगर याद रख, 'अब आपसमें लड़नेवाले

ये हिंदू और मुसलमान दिल्लीके सिंहासनपर नहीं हो सकेंगे।'

बादशाह—गजब हो गया!

बीरबल—सतीने भयानक शाप दे दिया!

सती—दिल्लीपर कोई तीसरी जाति राज्य करेगी। वे लोग हिंदू और मुसलमान दोनोंके कान पकड़ेंगे।

बादशाह—मैं आया था महर माँगने!

बीरबल—मिला कहर!

बादशाह—मेरी तकदीरमें 'अमर बादशाह' होना नहीं लिखा है बीरबल!

बीरबल—नहीं लिखा है बादशाह सलामत! हमलोग झोपड़ीमें रहकर महलका सपना देखा करते हैं!

बादशाह—चित्तौड़की लड़ाईने मेरा सारा मनसूबा मिट्टीमें मिला दिया। सतियोंके शापने मेरी राज्यश्री हरण कर ली है। मेरा खानदान 'तैमूरीताज' बहुत दिनोंतक नहीं चलेगा। एक हजार साल भी नहीं चलेगा।

पतिके शवको अपनी गोदमें रखकर लाजवन्ती सती हो गयी। बादशाहने वहीं प्रतिज्ञा की कि अब मैं किसीके साथ युद्ध नहीं करूँगा। सतीके चरणोंकी भस्म अपने मस्तकमें लगाते हुए दोनों लौट आये।



महाकाल

सम्राट् विक्रमादित्य अन्य राजाओंकी तरह विलासी नहीं थे। वे हर समय इसी चिन्तामें रहा करते थे कि प्रजाको किस-किस बातकी तकलीफ है और वह किस प्रकारसे दूर की जा सकती है। जिस शासकको प्रजाकी चिन्ता नहीं, अपनी ही चिन्ता रहती है, उसे रक्षक नहीं भक्षक समझना चाहिये।

एक दिन प्रातः चार बजे महाराज अपने महलसे बाहर निकले। बिलकुल अकेले। किसानी वेष। एक ओरको चल दिये। एक जंगलमें जाकर देखा कि एक तरफसे एक रीछ आया और उनकी सामनेवाली राहपर होकर आगे चलने लगा। उस रीछने महाराजको नहीं देखा; परंतु सम्राट्ने उसे देख लिया था।

थोड़ी दूर चलकर वह रीछ जमीनपर लोट-पोट हो गया और एक आलाबाला सोलहसाला नवयुवती बनकर एक कुएँपर जा बैठा। सम्राट् भी छिपकर यह निराला तमाशा देखने लगे।

तबतक कुएँपर दो सिपाही आये। दोनों सगे भाई थे। छुट्टी लेकर घर जा रहे थे।

युवतीने मुस्कुराकर बड़े भाईसे कहा—'तुम्हारे पास कुछ खानेको है?' बड़ा सिपाही—'जी नहीं।'

युवतीने कटाक्ष मारकर कहा—'मुझे बड़ी भूख लगी है।'

बड़ा सिपाही उस युवतीपर मोहित हो गया था। वह बोला—'यदि आपकी आज्ञा हो तो समीपके किसी गाँवसे ले आऊँ?'

युवती—आपको तकलीफ होगी।

बड़ा—आपके लिये तकलीफ! आपके लिये जानतक दे सकता हूँ।

युवती—क्यों?

बड़ा—सुन्दरताके कारण। सुन्दरता भी ईश्वरमेंसे आती है। सुन्दर चीजको देखनेसे मालूम होता है मानो ईश्वरका दर्शन हो रहा है।

युवती—तो ले आओ।

बड़ा भाई चला गया।

युवतीने छोटे भाईको कटाक्ष मारा और अपने पास बुलाया। वह आकर अदबसे अलग बैठ गया।

युवती—मैं तुम्हींपर रीझ गयी हूँ।

छोटा—ऐसी बात मत कहिये। आपने बड़े भाई साहबपर कृपा-कटाक्ष किया था। आप मेरी भावज हैं। भावज माता होती है।

युवती—तुम बड़े मूर्ख मालूम पड़ते हो।

छोटा—क्यों?

युवती—तुम्हारे बड़े भाईकी क्या उम्र है?

छोटा—पचास साल।

युवती—तुम्हारी?

छोटा—पैंतीस साल।

युवती—और मेरी?

छोटा—आप ही जानें।

युवती—अपनी बुद्धिसे बताओ।

छोटा—होगी पंद्रह-सोलह सालकी।

युवती—अब तुम्हीं बताओ कि एक पंद्रह सालकी लड़की पैंतीस सालके आदमीको पसंद करेगी या पचास सालवाले बूढ़ेको?

छोटा सिपाही निरुत्तर हो गया।

युवती—जो मैं कहूँ वही करो। तुम मेरे साथ भाग चलो।

छोटा—कदापि नहीं। आप मेरे बड़े भाईसे सप्रेम बातचीत कर चुकी हैं। आप भावज हैं और माताके समान हैं।

युवती—मेरी आज्ञा न मानोगे तो मारे जाओगे।

छोटा—चाहे कुछ भी हो, इसकी परवाह नहीं।

थोड़ी देरमें पावभर पेड़ा लेकर बड़ा सिपाही आ गया।

युवतीने अपनी साड़ी जहाँ-तहाँसे फाड़ डाली थी। उसी फटी साड़ीसे मुँह ढँककर वह रोने लगी।

बड़ा—रोती क्यों हो? यह लो पेड़ा खाओ।

युवती—पेड़ा उधर डाल दो कुएँमें और तुम भी उसीमें कूद पड़ो।

बड़ा—क्यों?

युवती—तुम्हारा यह छोटा भाई बड़ा दुष्ट है। यदि तुम जल्दी न आ जाते तो इसने मेरा सतीत्व नष्ट कर दिया होता। यह देखो छीना-झपटीमें मेरी रेशमी साड़ी तार-तार हो गयी है।

बड़ा—क्यों बे? यह हरकत?

छोटा—भाई साहब! यह झूठ कहती है।

बड़ा—हूँ! तू सच्चा और वह झूठी है?

छोटा—मैंने कुछ भी नहीं किया।

बड़ा—और यह बिना कारण ही रोती है? साड़ी कैसे फटी?

छोटा—मैं क्या जानूँ।

बड़ा—अबे साले! तू बड़ा पाजी है।

छोटा—देखो, गाली मत देना। गालीमें विष बसता है।

बड़ा—चोरी और सीना जोरी! तू भाई नहीं दुश्मन है।

इतना कहकर उसने तलवार म्यानसे बाहर निकाली। छोटा भाई था तो सुशील; परंतु था कलियुगी ही न। वह भी आ गया सिपाहियाना गरमीमें। उसने देखा कि बेकसूर होनेपर भी उसका भाई एक अनजान और बदचलन औरतके कहनेसे उसे धर्मभ्रष्ट समझ रहा है। उसने भी तलवार सँभाली।

दोनोंने पैंतरे बदले और चलने लगी तलवार। पाँच मिनटमें दोनों मरकर गिर गये। युवती हँसी। जमीनपर लेट गयी और

लोट-पोटकर काला साँप बन गयी। आगेको चल दी। सम्राट्ने प्रण कर लिया कि इस विचित्र जीवकी पूरी कारगुजारी वे अवश्य देखेंगे।

आगे चलकर मिली एक नदी। उसमें आ रही थी एक बड़ी नाव। उसमें बैठे थे तीन सौ आदमी। जब वह नाव बीच धारामें पहुँची, वही काला साँप नदीमें कूद पड़ा और नावकी सीधमें तैर चला। साँपोंका कायदा है कि पानीमें सीधे तैरते हैं। शेर, सूअर और साँप—ये तीनों धार काटकर सीधे चलते हैं। नावके पास पहुँचकर साँप चिटका और नावमें जा गिरा। लोगोंने यह तमाशा जो देखा तो साँपकी ओरसे हटकर दूसरी ओर भागे। तीन सौ आदमी नावके एक किनारे हो गये। नाव उलट गयी, सब डूबकर मर गये। वह साँप फिर लौटा और जमीनपर लोट मारने लगा।

सम्राट्ने सोचा—अजब लीला है।

अबकी बार वह एक वृद्ध ज्योतिषी बन गया। सफेद दाढ़ी शोभा दे रही थी। हाथमें पत्रा। पैरोंमें खड़ाऊँ। ललाटपर चन्दन। सम्राट्ने आगे दौड़कर उसके कदम पकड़ लिये।

वह—तुम कौन?

सम्राट्—मैं एक राजा हूँ।

वह—क्या चाहते हो?

सम्राट्—मैं सुबहसे आपके पीछे लगा हूँ कि जब आप रीछके रूपमें थे। आपने युवती बनकर और साँप बनकर जो-जो काम किये, वह मैंने देखे हैं। यह आपका चौथा रूप है।

वह—अच्छा, तो तुम क्या पूछते हो?

सम्राट्—यह कि आप कौन हैं?

वह—तुम इस बवालमें मत पड़ो। अपने रास्ते जाओ।

सम्राट्—नहीं, स्वामिन्! जबतक आपका परिचय प्राप्त न कर

लूँगा तबतक डग न धरूँगा।

वह—मेरा नाम है महाकाल। मैं गीतामें वर्णित उत्कट काल हूँ। लोगोंके विनाशके काममें लगा रहता हूँ।

सम्राट्—आप जिसे चाहते हैं, उसे साफ कर डालते हैं?

महाकाल—नहीं, मैं स्वतन्त्र नहीं हूँ। परमात्माका एक तुच्छ सेवक हूँ। परमात्मा सम्राट् हैं। प्रारब्ध प्रधान मन्त्री है। मैं एक अधिकारी हूँ। प्रधान मन्त्रीकी आज्ञासे मैं मारनेयोग्य पात्रोंको पहचानता हूँ।

सम्राट्—अच्छा महाकालजी! मेरी मौत कब आयेगी?

महाकाल—यह बतानेकी सरकारी आज्ञा नहीं है। तुम अभी बहुत दिनोंतक जीवित रहोगे। तुम्हारे द्वारा ईश्वर अनेकों परोपकारके काम करायेंगे। तुम भी ईश्वराधीन, मैं भी ईश्वराधीन, जाओ।

सम्राट्—फिर भी इतना तो बतला दीजिये कि मेरी मौत कैसे होगी?

महाकाल—कोठेपरसे गिरकर। जिस दिन तुम रपट पड़ोगे, समझ लेना कि बस, मौत आ गयी।

सम्राट्—अब आप किसकी घातमें हैं?

महाकाल—तुम्हारे अधिकारसे बाहरका प्रश्न है।

सम्राट्—आपने रीछ बनकर क्या किया था?

महाकाल—एक आदमी एक पेड़पर चढ़ा लकड़ी काट रहा था। उसको पेड़परसे गिरानेके लिये मैं रीछ बन गया था और पेड़पर चढ़ गया था, उसे गिराकर मारा था।

सम्राट्—आप विविध प्रकारके रूप क्यों बनाते हैं?

महाकाल—जिसकी मौत जिस रूपमें लिखी होती है, उसे मैं उसी बहानेसे मारता हूँ।

'हीला रिजक, बहाने मौत।'

सम्राट्—क्या कोई आपके कराल हाथसे बचा भी है?

महाकाल—

कोइ कोइ जोगी बच गये, पारब्रह्मकी ओट।
चक्की चलती कालकी, पड़ी सभीपर चोट॥

सम्राट्—क्या करनेसे मौत नहीं आती?

महाकाल—परमात्माकी शरणागतिसे। परमात्मा अपने भक्त का काल अपने हाथमें ले लेते हैं। उसपर मेरा अथवा प्रधान मन्त्रीका कोई अधिकार नहीं रह जाता।

सम्राट्—आपका यह आजका किस्सा यदि किसीको मैं सुनाऊँ तो क्या वह सुनेगा? सुनकर भी क्या वह कुछ समझ सकेगा?

महाकाल—लोग प्रेमके किस्से लिखते-पढ़ते हैं। दिलबहलावकी कहानियाँ सुनते हैं। जिन कहानियोंसे दिमागको खुराक मिलती है, उन कहानियोंको वे नहीं सुनते।

सम्राट्—सुनेंगे भी तो उसे गप्प मानेंगे।

महाकाल—कहेंगे, ऐसा हो ही नहीं सकता।

सम्राट्—सचमुच यह जगत् विचित्रताओंकी रंगभूमि है। इस जगत्को कोई भी नहीं जानता है, यद्यपि सभी समझते हैं कि वे इस जगत्को जानते हैं।

महाकाल—यह भी उनकी एक विचित्रता ही समझो।

सम्राट्—मैं आपको प्रणाम करता हूँ। अब आप जाइये। आपके दर्शनसे मुझे यह उपदेश मिला कि 'काल और ईश्वरको कभी नहीं भूलना चाहिये।'



भक्त रानी मैनावती

आजसे दो हजार वर्ष पूर्व भारतकी राजधानी उज्जैनमें थी। भारत-सम्राट् भरथरी (भर्तृहरि) महाराज जब योगी हो गये, तब विक्रमादित्यजी सिंहासनपर विराजमान हुए। उस समय बंगालके राजा गोपीचन्दजी थे, जो कि भरथरीके मामा थे। गोपीचन्दने जब सुना कि भरथरीने गुरु गोरखनाथजीसे अमरविद्या पढ़ी है और भोग त्यागकर योगसे अनुराग किया है, तब वे भी गोरखनाथजीके शिष्य हो गये। गुरुने गोपीचन्दसे भी कहा कि यदि तुम अमरविद्याके प्रेमी हो तो राज्य त्याग दो और भरथरीके साथ रहो। गोपीचन्दजीने वही किया। राज्य त्याग दिया। अपने छोटे भाईको गद्दीपर बैठाकर आपने योगीरूप धारण किया। गोरखगुरुके आज्ञानुसार रानी और मातासे भिक्षा माँगनेके लिये गोपीचन्दजी रंगमहलमें गये।

रानी—मैं आपको क्या भिक्षा दूँ? मेरे आँसुओंका हार लेते जाओ। जनक राजाकी तरह क्या आप भोगके अंदर योगको नहीं निभा सकते?

राजा—रानी साहबा! योगसे भी कठिन भोग है। बिना योगके भोग भी तो नहीं हो सकता। योग और भोग दोनोंसे समाधि लगती है। परंतु भोगका जाननेवाला योगके जाननेवालेसे भी अधिक दुर्लभ है।

रानी—क्या अमरविद्याके लिये राज्यका त्याग आवश्यक है?

राजा—आवश्यक है। अमरविद्याके नियमोंको पालनेके लिये राज-काज छोड़ना अनिवार्य है।

रानी—यदि मुझे त्यागनेसे आप अमर हो सकते हैं तो मुझे त्याग दीजिये। मैं अपने कलेजेपर पत्थर रख लूँगी, परंतु आपकी हानि न करूँगी। सच्ची पत्नी पतिके सुखके लिये सब सुख त्याग सकती है।

राजा—मेरे अनुरागके लिये आप जो त्याग कर रही हैं, उसके

लिये मैं आपका कृतज्ञ हूँ। मैं आपसे यही भिक्षा माँगने आया हूँ कि आप सहर्ष मुझे वनवासकी आज्ञा प्रदान करें।

रानी—सहर्ष कहती हूँ कि आप अमरविद्याके विद्यार्थी बनें। समोद चाहती हूँ कि जनता भरथरीके साथ आपका भी नाम लिया करे। एक भिक्षा आप भी मुझे देंगे क्या?

राजा—क्या?

रानी—जिस दिन मेरी मौत हो, उस दिन आपके दर्शन प्राप्त करूँ।

राजा—तथास्तु!

× × × ×

गोपीचन्द—अलख! माताजी! भिक्षा दीजिये।

मैनावती—आज मैं धन्य हुई। मेरे पेटसे एक भक्त पुत्र उत्पन्न हुआ। इसलिये मैं धन्य हूँ।

गोपीचन्द—मुझे भिक्षा दो माताजी!

मैनावती—मैं तुझे तीन शिक्षाओंकी भिक्षा देती हूँ। एक शिक्षाका मूल्य एक हीरेसे कम नहीं है।

गोपीचन्द—शिक्षाके लिये ही मैंने हीरोंकी खान यानी राजपाटका त्याग किया है। आप शिक्षाकी भिक्षा दीजिये।

मैनावती—मेरी पहली शिक्षा यह है कि सर्वदा किलेके अंदर रहना, जिससे शत्रु लोग हमला न कर सकें।

गोपीचन्द—मैं आपकी शिक्षाको समझ नहीं सका हूँ। आपने रहस्यवादकी वाणीमें शिक्षा दी है।

मैनावती—मनुष्यके लिये ब्रह्मचर्यसे बढ़कर कोई किला नहीं है। रोग, शोक, भय, बाधा, व्याधि, चिन्ता और अशान्ति—कोई भी शत्रु इस किलेपर हमला नहीं कर सकता। जो ब्रह्मचारी नहीं, वह न तो भक्त बन सकता है और न योगी। योगी या तो भक्त बन जाता है या ज्ञानी बन जाता है। योगका दर्जा पास कर तुम भक्त बन जाना—ज्ञानी मत बनना। ब्रह्मचर्यके किलेमें जब

भक्त-मन निवास करने लगता है, तब उसे किसी शत्रुका भय नहीं रहता है। यही मेरी प्रथम शिक्षाका रहस्य है।

गोपीचन्द—कृतज्ञ हूँ मैं माताजी! आपका ऋण कभी नहीं चुका सकता। आपकी योग्यताको प्रणाम करता हूँ। आपकी दूसरी शिक्षा क्या है?

मैनावती—मेरी दूसरी शिक्षा यह है कि सर्वदा मोहनभोगका भोजन करना।

गोपीचन्द—यह रहस्यवादी वाणी मालूम पड़ती है, क्योंकि परिस्थितिके विरुद्ध है। योगीको कभी-कभी एक मुट्ठी चना भी नसीब नहीं होता—मोहनभोग कैसा?

मैनावती—दिन-रातके चौबीस घंटेमें केवल एक बार ही किलकिलाकर भूख लगा करती है। उस समय चना-चबैना भी मोहनभोगके समान मालूम होता है। बिना भूखके मोहनभोगका भोजन भी चना-चबैना है। एक हालतमें चना भी मोहनभोग बन जाता है और एक हालतमें मोहनभोग भी चना रह जाता है। मेरी इस दूसरी शिक्षाका रहस्य यह है कि दिन-रातमें केवल एक बार भोजन करना, सो भी तब—जब भूख लगे।

गोपीचन्द—साधुवाद! आपका अनुभव लाजवाब है। आपकी तीसरी शिक्षा क्या है?

मैनावती—तीसरी शिक्षा यह है कि जब नींद लगे तब मसहरीमें सोना।

गोपीचन्द—यह भी रहस्यवादका वचन है। इस शिक्षाका मर्म भी मेरी पहुँचसे बाहरकी बात है।

मैनावती—जो लोग निमन्त्रण देकर नींदको बुलाते हैं, उनको पलँगपर भी अच्छी नींद नसीब नहीं होती। सोनेका समय हो गया, इसलिये सोना चाहिये, इस समझमें जो मसहरीपर भी सोते हैं, वे करवटें बदला करते हैं। परंतु जब लकालक नींद आती है,

तब खेतके ढेलोंमें भी पड़कर गहरी नींद ली जा सकती है। मेरी तीसरी शिक्षाका यही रहस्य है कि जब खूब नींद आये तभी सोना, हर समय आलसी बने पड़े मत रहा करना।

गोपीचन्द—साधु! साधु! आपकी तीनों अमूल्य शिक्षाएँ मैंने अच्छी तरह गाँठ बाँध ली हैं। ये तीनों रत्न सर्वदा और सर्वथा मेरे पास रहेंगे।

मैनावती—पिंगला रानीने अपने खराब आचरणसे अपने पति भरथरीको योगी बना दिया है। मैनावतीने अच्छे आचरणसे अपने पुत्र गोपीचन्दको योगी बना दिया है। फलतः इस संसारमें बुरी-से-बुरी और अच्छी-से-अच्छी स्त्री भी मौजूद हैं।

गोरखनाथ—वत्स गोपीचन्द!

गोपीचन्द—महाराज!

गोरख—तुमने अपनी रानीसे क्या भिक्षा प्राप्त की?

गोपीचन्द—दूसरेके उपकारके लिये अपना स्वार्थ त्याग करना चाहिये। रानीने मुझे इसी शिक्षाकी भिक्षा दी है।

गोरख—तुमने अपनी मातासे क्या भिक्षा पायी?

गोपीचन्द—माताने तीन शिक्षाओंकी भिक्षा दी है—(१) ब्रह्मचर्यसे रहना, (२) खूब भूख लगे तब भोजन करना और (३) खूब नींद लगे तब सोना।

गोरख—ठीक है। तुमको सिद्धि प्राप्त होगी। प्रत्येक स्त्री प्रवृत्तिका जाल बिछाये बैठी है। प्रत्येक स्त्रीका सर्वस्व प्रवृत्तिमार्ग है। परंतु रानी मैनावतीने निवृत्तिका पक्ष ग्रहण किया है। मैंने यह पहली स्त्री देखी है, जिसने निवृत्तिसे प्रेम दर्शाया है। मैनावती रानीने सुमित्रा रानीकी तरह ब्रह्मको प्यार किया है। वास्तवमें तुम्हारी माता— माता कहलाने योग्य है। मैं उसको श्रद्धापूर्वक प्रणाम करता हूँ।

गोपीचन्द—ईश्वर करे, मेरी माता-जैसी सब माताएँ हो जायँ।

गोरख—तुम और भरथरी मेरे साथ-साथ स्यालकोट चलो। स्यालकोटका राजकुमार पूरनमल बड़ी भारी विपत्तिमें फँस गया है। पूरनमलको भी प्रवृत्तिके दलदलसे निकालना है। उसके बाद तुम तीनों मेरे साथ विन्ध्याचलमें चलकर तप करना और अमरविद्याका अध्ययन करना। मेरे द्वारा तुम तीनों अमर बनोगे। तुम तीनोंकी कहानी जगत्‌में प्रसिद्ध रहेगी।

गोपीचन्द—आजतक कितने व्यक्ति अमर हो चुके हैं?

गोरख—एक हजार।

गोपीचन्द—वे कहाँ रहते हैं?

गोरख—हिमालयमें। कोई-कोई सर्वत्र घूमते भी रहते हैं। परंतु कोई उनको पहचानता नहीं। वे लोग अपना नाम बदल लेते हैं।

गोपीचन्द—मर और अमरमें क्या अन्तर है?

गोरख—खेतके काश्तकार दो प्रकारके होते हैं—(१) शिकमी और (२) दखिलकार। शिकमी किसानको जमीनदार बेदखल कर सकता है; परंतु दखिलकारसे खेत नहीं छीना जा सकता। तुमलोग शरीररूपी खेतके अभी शिकमी काश्तकार हो। मेरी सहायतासे अब तुम लोगोंको दखिलकार काश्तकार बनना चाहिये ताकि कालरूपी जमीनदार तुम्हारा खेत न छीन ले। कालद्वारा शरीर इसीलिये नष्ट किया जाता है कि जिससे किसीको अनुभव प्राप्त न हो। अनुभवकी प्राप्तिसे तुम ज्ञानी हो जाओगे और कालचक्रका बहिष्कार कर दोगे। उस समय भक्तिकी झलक सामने आयेगी। मृत्युप्रिय भक्तसे जीवनप्रिय भक्तका दर्जा श्रेष्ठ माना गया है।

लोग कहते हैं कि 'गोपीचन्द-भरथरी' अमर हैं और संसारमें नाम बदलकर घूमा करते हैं।



योगी गोरखनाथजी

एक घनघोर जंगलमें एक बरगदके नीचे योगी गोरखनाथजी बैठे थे। उस समय उनकी वृत्ति अन्तर्जगत्‌में विचरण कर रही थी और वे अपने-आप अपने-आपसे बातचीत कर रहे थे। तबतक भारत-सम्राट् नवयुवक महाराज भरथरीजी (भर्तृहरि) एक काले हिरनके पीछे घोड़ा दौड़ाते हुए उधर आ निकले। योगी गोरखके पीछे खड़े होकर महाराज उनकी खुदमस्तीकी बातें सुनने लगे।

गोरख—दुआ माँग! दुआ कर! दुआसे जमीनतक फट जाती है और आसमानतक उड़ जाता है। जिस कामको कोई नहीं कर सकता, उसको दुआ कर सकती है। प्रार्थना कर प्रार्थना।

भरथरी—(मनमें) कोई महात्मा मालूम पड़ता है।

गोरख—अगर तू उसको देख लेगा तो उसके परदेमें परदा ही क्या रह जायगा? विचित्र परदा तो इसीलिये बनाया गया है कि उसको कोई देख न ले।

भरथरी—कोई तत्त्वज्ञानी जान पड़ता है।

गोरख—सब जगत् परमात्मामें है। परमात्मा मुझमें है, तो महात्मा बड़ा हुआ न परमात्मासे?

भरथरी—अबकी दफा दूरकी मसकी! जीवात्मा और महात्मा दोनों ही परमात्माके भीतर रहते हैं, जैसे तारे और चाँद आसमानके भीतर रहते हैं।

गोरख—शक्तिकी उपासना करनेवाले 'रावण' बन जाते हैं और शिवकी उपासना करनेवाले 'राम' बन जाते हैं।

भरथरी—इस हिसाबसे मैं एक 'रावण' हूँ; क्योंकि राजा होता है शक्तिका उपासक।

गोरख—इस विशाल भूगोलमें सब स्त्रियाँ-ही-स्त्रियाँ हैं। उनकी इच्छा है कि जमीनपर जो रहे, सो एक औरत बनकर।

भरथरी—यह बात समझमें नहीं आयी। यह आदमी कुछ सनकी भी मालूम पड़ता है।

गोरख—इस विशाल भूगोलमें सब पागल-ही-पागल रहते हैं। अगर कोई होशमें आने लगता है तो उसे पागल लोग पागल कहने लगते हैं; क्योंकि वे खुद पागल हैं।

भरथरी—सभी पागल हैं? अबकी फिर इसने जकंद भरी। मालूम होता है कि विचार करते-करते यह आदमी पागल हो गया है।

गोरख—जमीन कहती है कि मैं बड़ी और आसमान कहता है कि मैं बड़ा। औरत कहती है कि मैं बड़ी और मर्द कहता है कि मैं बड़ा। वास्तवमें न जमीन बड़ी, न आसमान बड़ा। बड़ी है 'भूल' जो कि दोनोंको अहमक बनाये हुए है।

भरथरी—क्यों जी! तुमने इधर कोई काला हिरन देखा था?

गोरख—मैं यहाँ नहीं रहूँगा। जहाँ सब अन्धे-ही-अन्धे हैं, वहाँ मैं नहीं रहूँगा, जहाँ सब पागल-ही-पागल हैं, वहाँ मैं कैसे रह सकूँगा? जिस गाँवके सब लोग नशेबाज हैं, उस गाँवमें मेरा गुजारा कैसे होगा? नहीं-नहीं, औरतोंके इस शहरमें मेरा निवास नहीं रह सकता।

भरथरी—क्यों जी! तुम कौन हो? मेरी बात नहीं सुनते?

गोरख—आपकी अप्रकाशित 'विधान' नामक नाटक-पुस्तकमें दो भाग हैं—एक 'दुःखान्त नाटक' और दूसरा 'सुखान्त नाटक'। दुःखान्त नाटक पहले खेला गया और सुखान्त नाटक बादको खेला जायगा। परंतु इस दुःखान्त नाटकका अन्तिम परदा कब उठेगा? इसकी समाप्ति किस संवत्‌में होगी? ऐसा न हो कि आप

'सुखान्त'का समय भूल जायँ। आपमें चाहे कोई अवगुण न हो, किंतु भूलका अवगुण तो है ही।

भरथरी—क्यों जी! यहाँसे कोई गाँव नजदीक है?

गोरख—यह धरतीका देश बहुत बड़ा है, यह विशाल धरतीका देश, पानीके देशके बीचोबीच सो रहा है और पानीका देश, आगके देशमें हिलोर भर रहा है, तो भी इस धरतीपर रहनेवाले समस्त कीटाणु बेफिक्रीके इन्तजाम सोच रहे हैं, निधड़क घूम रहे हैं सब निशाचर!

भरथरी—पूरा पागल मालूम होता है। मैं पूछता हूँ आगरेकी बात और यह देता है दिल्लीकी खबर।

संध्या हो रही है और उस हिरनका पता नहीं।

× × × ×

तबतक गोरखनाथजीका वह पालतू काला हिरन वहाँ आ पहुँचा, जिसके पीछे महाराज परेशान हो रहे थे। महाराजने एक तीर चला दिया और हिरन मरकर वहीं योगिवर गोरखनाथजीकी गोदीमें गिर पड़ा। उनकी चित्तवृत्ति अन्तर्जगत्‌से हटकर इस बाहरी जगत्‌में आ गयी। हिरनको मरा हुआ देख गोरखनाथजीने महाराजसे कहा—

गोरख—तुम कौन हो?

भरथरी—भारतके उदय-अस्तका मैं राजा हूँ।

गोरख—भारतका उदय जब होगा तब होगा, तुम्हरा अस्त तो आज हो जायगा।

भरथरी—क्यों?

गोरख—इस निरपराध और पालतू हिरनको क्यों मारा?

भरथरी—मैं राजा हूँ, जिसको चाहूँ मारूँ।

गोरख—मैं नहीं मानता कि तुम राजा हो। शूर नहीं, क्रूर हो।

भरथरी—तुम्हारे न माननेसे क्या होता है?

गोरख—हमारे न माननेसे तुम राजा रह कैसे सकते हो?

भरथरी—अच्छा।

गोरख—और नहीं तो?

भरथरी—क्या करोगे मेरा तुम?

गोरख—जो तुमने हिरनका किया, ठीक वही।

भरथरी—तुम्हारे पास हथियार तो कोई है ही नहीं, फिर मुझको मारोगे कैसे?

गोरख—हथियारसे मारा करते हैं हिजड़े लोग। हमारी दुआ ही हमारी तलवार है। दुआसे जमीनतक फट जाती है। तुम्हारा फट जाना कौन बड़ी बात है?

भरथरी—क्या मैंने कोई अपराध किया है?

गोरख—बड़ा भारी।

भरथरी—क्या?

गोरख—मार वही सकता है कि जो जिला सकता हो। जो जिलाना नहीं जानता, उसको मारनेका हक नहीं है, हुक्म नहीं है, कानून नहीं है।

भरथरी—मरकर कोई जीवित नहीं हो सकता। यह बात प्रकृतिके नियमसे विरुद्ध है।

गोरख—प्रकृतिके नियमोंको तुम क्या जानोगे? प्रकृतिका नाम ही सुन लिया या उसे कभी देखा भी? विष खानेसे आदमी मर जाता है, परंतु शंकरजी विष खाकर अमर हो गये। बिना जड़का कोई पौधा नहीं होता; किंतु अमरबेल बिना मूलके ही फूलती है। सम्भव और असम्भव दोनों नियमोंकी नियमावलीकी माला जो प्रकृति पहिने है, उसका नाम ही सुन भगे हो या कुछ जानते भी हो?

भरथरी—मुझे फुरसत नहीं, जो ज्यादा बकवाद करूँ। हिरनको लेकर राजधानी लौटना है।

गोरख—हिरनको लेकर? हिरनको छोड़कर ही राजधानी चले जाओ तो मैं जानूँ? बिना इसे जीवित किये तुम एक डग नहीं रख सकते। राजधानीमें नहीं जाओगे तो कुरबानीमें जरूर जाओगे। हजार बातकी एक बात यह कि इसे जीवित करो या मरनेको तैयार हो जाओ।

भरथरी—तुम कौन हो?

गोरख—पब्लिकको बनाने और बिगाड़नेका खेल राजा लोग खेला करते हैं। हम योगी वे लोग हैं जो राजाओंके बनाने-बिगाड़नेका खेल खेला करते हैं।

भरथरी—क्या तुम इस हिरनको जीवित कर सकते हो?

गोरख—अगर जीवित कर दें तो?

भरथरी—तो भारतका सम्राट् तुम्हारा गुलाम हो जायगा।

गोरख—कञ्चन, कामिनी और कीर्तिकी आपातकमनीय त्रिमूर्ति राजपाटको छोड़कर नम्रता, ब्रह्मचर्य और त्यागकी आपातभयावनी त्रिमूर्ति भक्तिमार्गमें आ जाओगे?

भरथरी—जरूर आ जाऊँगा।

अमरविद्या या प्राणकलाके एक आचार्य गोरखनाथजीने उसी क्षण मरे हुए हिरनको सचमुच जिला दिया।

गोरख—राजा भरथरी!

भरथरी—बाबा भरथरी कहो बाबा!

गोरख—राजा बड़ा कि योगी?

भरथरी—राजा केवल मार सकता है, पर योगी मार भी सकता है और जिला भी सकता है।



गुरु ही ब्रह्मा, विष्णु और महेश्वर हैं!

(१)

विन्ध्याचलकी एक चोटीपर खड़े हुए महात्मा कपिलजीने अपने शिष्य नन्दनसे कहा—तुम क्या चाहते हो?

नन्दन—भगवान्‌का निरन्तर दर्शन।

कपिल—तो त्रिगुणकी तिकड़मसे बचकर रहना सीखो।

नन्दन—त्रिगुण किसे कहते हैं गुरुदेव!

कपिल—सत्त्व, रज और तम।

नन्दन—वे क्यों त्याज्य हैं?

कपिल—सत्त्वगुण मारता है कीर्तिके द्वारा। रजोगुण मारता है धनके द्वारा और तमोगुण मारता है स्त्रीके द्वारा। कामिनी, कञ्चन, कीर्ति—यही त्रिगुणकी तिकड़म है। यही तीन निशाचर जीवात्माका सत्यानाश किया करते हैं।

नन्दन—इस त्रिगुणको बनाया किसने महाराज!

कपिल—मायाने! मायासे बचकर चलना ही जीवात्माका पुरुषार्थ है। त्रिगुणात्मक माया ही जीवात्माकी समझकी परीक्षाभूमि है। अगर त्रिगुणके त्रिशूलकी एक भी नोक छू ली तो फिर सफाया समझना। गुरुका काम है—ज्ञान देना, इसलिये मैं यही ज्ञान देता हूँ कि गुणातीत बनो। अब मैं जाता हूँ।

नन्दन—जाते हैं? कहाँ जाते हैं आप? गुरुदेव! आपके लिये तो मैंने माता-पिता त्यागे; क्या आप भी नसीब न होंगे?

कपिल—मैं सदा तुम्हारे पास हूँ। सद्‌गुरु, परमात्मा और माया—ये तीनों हर जगह हैं। निश्चयके साथ जब जहाँ याद

करोगे, मैं प्रकट हो जाऊँगा। वैसे भी मैं तुम्हारी रक्षा करता रहूँगा, पर साथ नहीं रहूँगा।

नन्दन—क्यों?

कपिल—योग, भोग और भोजन—ये तीन काम एकाकी करने चाहिये। मैं गङ्गासागरपर तप करने जाता हूँ। तुम इसी विन्ध्याचलकी चोटीपर तप करो। फिर भी मुझे दूर मत समझना। माया, संत और परमात्माके लिये दूरी नामकी कोई चीज नहीं होती।

नन्दन—मायाकी व्यापकता क्या क्रिया करती है?

कपिल—त्रिगुणके द्वारा जीवात्माको भुलाये रखती है। मुसाफिरको मंजिलतक न पहुँचने देना ही उसका जीवनव्रत है।

नन्दन—संतकी व्यापकता क्या क्रिया करती है?

कपिल—प्रत्येक जीवात्माको अच्छाई और बुराईकी तमीज दिया करती है।

नन्दन—परमात्माकी व्यापकता क्या काम करती है?

कपिल—माया और संतकी करतूत देखा करती है और दोनोंको अपनी सत्तासे जीवित रखती है।

नन्दन—क्या संतका काम परमात्मा नहीं कर सकता?

कपिल—नहीं।

नन्दन—क्यों महात्माजी?

कपिल—परमात्मा वक्ता नहीं है, द्रष्टा है। वह देखता है, मगर बोलता नहीं। बोलनेका काम संतके अधीन किया गया है।

नन्दन—क्या परमात्मामें बोलनेकी शक्ति नहीं है?

कपिल—उनमें सब शक्तियाँ हैं। वे बोल सकते हैं, पर बोलना नहीं चाहते। उन्होंने अपनेको आप ही मूक बना दिया है। इसका

कारण वे ही जानें। उनके अवतार बोला करते हैं, पर वे स्वयं नहीं बोलते।

नन्दन—न बोलना परमात्माकी एक अदा है?

कपिल—जो समझो।

(२)

महात्मा कपिलजीके चले जानेके एक महीने बाद, एक दिन नन्दन बाबा पहाड़ीपर घूम रहे थे। दैवात् एक स्थानपर उनको सोनेकी एक खान मिल गयी।

सोनेकी खान देखते ही भगतजीकी नीयत बदल गयी। आप कहने लगे—'गुरुजीने त्रिगुणसे बचनेका उपदेश दिया है। मगर उनके प्रवचनसे परिवर्तनकी गुंजाइश है। मान लो कि मुझे आज कञ्चन मिल गया है। यदि मैं इस कञ्चनद्वारा बुरे कर्म करूँ तो यह हानिकर प्रमाणित हो सकता है। उस अवस्थामें कञ्चन त्याज्य ठहराया जा सकता है। पर इसी कञ्चनसे अगर अच्छे काम करूँ तो यह धन कैसे जहर बन जायगा? गुरुजीके निर्णयमें यही आलोचना हो सकती है कि धन बुरा नहीं, किंतु उसका उपयोग बुरा हो सकता है।

भगत नन्दनदासजीने मजदूरोंको बुलवाया। राजलोग अपनी कन्नी-बसूली लेकर आ मौजूद हुए। भगतजीने उनको समझाया—'देखो, इस जगह एक मन्दिर बनेगा। उसमें भगवान् कपिलजी और शिवजीकी स्थापना होगी। तुम लोग जगद्गुरु कपिलजीको अभी नहीं पहचानते हो। पुरुष, प्रकृति और जीवके कर्तव्योंका निर्देश करनेवाले कपिलजी ही हैं। तीनोंकी स्थिति तो बहुतोंने मानी और जानी हैं। परंतु तीनोंका व्यावहारिक प्रोग्राम किसीने नहीं बतलाया। बोलो—'जगद्गुरु कपिलजीकी जय।'

राजों और मजदूरोंने देखा कि यहाँपर गहरा हाथ लगेगा।

उन्होंने श्रद्धा न होते हुए भी बड़े जोरसे नारा लगाया।

भगतजीने सोचा—अब गुरुजीकी नाराजी मिट जायगी। इस प्रान्तमें अपनी जय-जयकार सुनकर भला कौन ऐसा गुरु होगा, जो द्रवित न हो जाय।

भगतजीने राजोंसे कहा—केवल मन्दिर बनानेसे ही तुमको छुट्टी न मिल जायगी। मन्दिरके सामने कुआँ भी बनाना होगा।

राजोंने कहा—बनाना होगा। जरूर बनाना होगा। बिना कुएँका मन्दिर किस मसरफका?

भगतजी बोले—'केवल मन्दिर और कुँआ बनाकर ही तुम लोग न भाग सकोगे। एक धर्मशाला भी बनानी पड़ेगी।'

राजोंने कहा—'धर्मशाला भी बनानी पड़ेगी। जरूर बनानी पड़ेगी। अरे भाई, गुरुजीके दर्शनके लिये जो सारा आलम उमड़ पड़ेगा, वह ठहरेगा कहाँ?'

भगतजीने देखा—गुरुजीके दर्शनके लिये जो अखिल ब्रह्माण्ड उमड़ेगा तो धर्मशाला विशाल होनी चाहिये।

भगत—वह धर्मशाला कम-से-कम एक मीलके घेरेमें बनेगी। तीन मंजिलका किला रचकर खड़ा कर दो। सब काम पत्थरसे लिया जाय। यहाँ पत्थरकी कोई कमी नहीं है।

राजलोगोंमें एक काना राज उनका मुखिया था। उसने कहा—'न पत्थरकी कमी और न पैसेकी कमी। जहाँ जगद्गुरु कपिल हैं, जहाँ नन्दनदास-से भगत हैं वहाँ पैसेकी कौन कमी? पैसा कम नहीं तो पत्थर कैसे कम हो जायगा।'

दिनभर कुछ काम नहीं हुआ! केवल इमारतोंके नक्शे जमीनपर बनाये और बिगाड़े गये। इसी सिलसिलेमें काने राजने यह राज भी हासिल कर लिया कि सोनेकी खान किस जगहपर मिली है। खुशीके मारे बाबाजीने यह नहीं सोचा कि वे क्या कह

गये। फिर, उस खानमेंसे सोना निकालेंगे तो मजदूर ही, छिपानेसे क्या फायदा!

रात हुई। काने राजने सबको अपने आदेशमें कर लिया बाबाजीको पकड़कर एक पेड़से बाँध दिया गया। उनके सामने ही चाँदनी रातमें सोनेकी खान लूट ली गयी। सब लोग सोना ले-लेकर चंपत हुए। किसीने बाबाजीको बन्धन-मुक्ततक न किया। प्रातः जब चरवाहे लोग आये तब उन्होंने बाबाजीके बन्धन खोले।

भगतजी जमीनपर बैठ गये और कहने लगे—'गुरुके प्रवचनमें जो परिवर्तन करता है, उसकी यही हालत होती है। कञ्चनके अच्छे और बुरे उपयोग तो दूरकी बात है। मैं कहता हूँ कि कञ्चनको देखना ही महापाप है और कञ्चनका नाम लेनातक पाप है। राम! राम! कहाँ भटक गया था। जरूर ही त्रिगुणकी तिकड़मसे दूर रहना चाहिये। हरे-हरे—

गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णुर्गुरुर्देवो महेश्वरः।

जो लोग गुरु-वचनपर विश्वास नहीं करते उनका कल्याण नहीं होता। रातभर पेड़से बँधा रहा। सुबह न मन्दिर रहा, न कुआँ रहा और न धर्मशाला रही। अखिल ब्रह्माण्डकी जय-जयकार भी सुनायी न पड़ी। अगर चरवाहे लोग न आते तो शामतक भूखों मर जाता। धत् तेरे कञ्चनकी ऐसी-तैसी! आजसे मैं कभी त्रिगुणकी तिकड़ममें न पड़ूँगा।'

इस घटनाके तीन महीने बादका समाचार सुनिये। एक दिन बाबाजी व्यायाम कर रहे थे, इतनेमें ही एक यक्षिणी वहाँ आयी।

यक्ष-जातिकी स्त्रियाँ परम सुन्दर हुआ करती हैं। उस रमणीका शरीर गोरा था। पद्मिनी जातिकी थी। शरीरसे कमलकी महक आती थी। उसे देखते ही भगतजीकी नीयत बदल गयी। उमर थी पंद्रह सालकी।

भगतजी—तुम कौन हो?

स्त्री—मेरा नाम चातकी है। मैं कुबेरलोकमें रहती हूँ। मेरे पिताने आज्ञा दी है कि मैं स्वयं ही अपने लिये पति खोजूँ। बस, मैंने अपना पति खोज लिया।

भगतजी—किसे खोज लिया?

स्त्री—आपको!

भगत—हुश्! मुझे विवाह करना होता तो अपने घरमें रहकर न करता? जमींदारका लड़का हूँ। पढ़ा-लिखा हूँ। कुछ मूर्ख थोड़े ही हूँ।

चातकी—आप मेरे साथ विवाह करें अथवा न करें, मैंने आपके साथ विवाह कर लिया!

नन्दन—कैसे?

चातकी—इच्छासे। इच्छाका विवाह ही स्वयंवर कहलाता है। फिर हम लोग यक्ष हैं। इच्छाको ही प्रधान मानते हैं।

नन्दन—मैं तुमको छू नहीं सकता।

चातकी—छूनेके लिये किसने कहा आपसे? छूनेकी कोई जरूरत नहीं है। आप भजन कीजिये, मैं कन्द-मूल, फल-फूल लाकर आपकी पूजा किया करूँगी। छूनेकी तो बात ही नहीं है। छूना ही तो छूत है।

नन्दन—मैं तुमको अपने पास नहीं रख सकता।

चातकी—क्यों स्वामी?

नन्दन—मुझे स्वामी मत कहो!

चातकी—क्यों प्रियतम?

नन्दन—प्रियतम भी मत कहो!

चातकी—क्यों इष्टदेव?

नन्दन—हुश्! पगली! वही बात कही जाती है जिसे मैं सुनना

नहीं चाहता! कह दिया कि तुमको साथ नहीं रख सकता, बस चुपचाप अपना रास्ता नापो।

चातकी—आखिर इसका कारण?

नन्दन—मैं ब्रह्मचारी हूँ।

चातकी—फिर वही बात? जो लोग यह कहते हैं कि गृहस्थाश्रममें ब्रह्मचर्यका पालन नहीं किया जा सकता, वे दुर्बल मनुष्य हैं। अविवाहित रहकर ब्रह्मचर्यका पालन किया तो क्या किया? शंकरजीकी तरह पत्नीके साथ रहकर ब्रह्मचर्यका पालन करना चाहिये। विष्णुजी लक्ष्मीजीके साथ रहते हुए ब्रह्मचारी हैं। रामजी सीताजीके साथ रहकर भी ब्रह्मचारी हैं। कृष्णजी राधाजीको संग रखते हुए भी पूर्ण ब्रह्मचारी हैं। जिस बातके नमूने मौजूद हैं, उस काममें आना-कानी कैसी!

नन्दन—नहीं, नहीं! मेरे गुरुने मना किया है।

चातकी—क्या कहा था गुरुजीने?

नन्दन—कहा था कि कामिनीसे दूर रहना।

चातकी—जैसे गुरु आपके, वैसे मेरे! गुरुका कहना जरूर करना चाहिये। मैं भी तो नहीं कहती कि आप मुझे छुआ करें।

नन्दन—मैं किसी भी स्त्रीसे प्रेम नहीं कर सकता।

चातकी—मैं कब कहती हूँ कि आप मुझसे प्रेम करें। प्रेम तो आपको एक भगवान्‌से ही करना चाहिये।

नन्दनने सोचा—गुरुजीकी इस तालीममें कि औरतका साथ न करो, कुछ परिवर्तनकी गुंजाइश है। औरत बुरी नहीं, उसका उपयोग बुरा हो सकता है। मैं इसके साथ गृहस्थीका सम्बन्ध ही न रखूँगा। इसको भी परमात्माका भगत बना दूँगा।

दोनों साथ-साथ रहने लगे। जब फूस और आग इकट्ठे होते हैं, तब आग जलती ही है।

प्रथम तो कुछ दिनोंतक वह अलग ही रहती रही। फिर एक दिन उसने शास्त्रोंके प्रमाणसे यह प्रमाणित कर दिया कि अपने स्वामीकी चरणसेवा करना स्त्रीका प्रधान कर्तव्य है। प्रमाणरूपमें लक्ष्मीजीका उदाहरण पेश किया। वे तो दिन-रात अपने ब्रह्मचारी पतिकी चरणसेवा किया करती हैं। मैं तो केवल रातमें एक घंटेके लिये अपना यह जन्मसिद्ध अधिकार चाहती हूँ। नन्दनजीने उसका यह प्रस्ताव स्वीकार कर लिया।

धीरे-धीरे उस यक्षिणीने नन्दनजीके मन और शरीर—दोनोंपर पूरा-पूरा अधिकार कर लिया। उनके सारे बन्धन टूट गये। अब तो वे पूरे गृहस्थ बन गये। उनकी चौबीस वर्षकी तपस्या नष्ट हो गयी। उनका ब्रह्मचर्य-व्रत भङ्ग हो गयी। इस प्रकार उनकी साधनाको चौपट कर वह यक्षिणी एक दिन नन्दनजीको छोड़कर अपने लोकको चली गयी।

भगत नन्दनदास रो उठे। हाय! मेरी साधना भी गयी और वह भी हाथसे गयी। न राम मिले, न माया ही रही। न योग सधा, न भोग ही भोग पाया। सच है, जिन्हें गुरुके वचनोंमें विश्वास नहीं, वे मेरी ही तरहसे रोया करते हैं। कञ्चनके सम्बन्धमें जो मैंने परिवर्तनकी गुंजाइश देखी तो वह हाल हुआ और कामिनी-सम्बन्धी गुरुकी आज्ञामें जो मैंने तरमीमकी गुंजाइश देखी तो यह हाल हुआ। अब कीर्तिका जहर देखना बाकी रह गया है। तीनोंकी परीक्षा लेकर ही अब भक्ति करूँगा। चाहिये तो था मुझे गुरुवचनपर अटल रहना; परंतु अब तो त्रिगुणकी पूरी तिकड़म देखकर ही अनुभव प्राप्त करूँगा। गुरुजीकी जब दो बातें सच हुईं तब तीसरी भी सच होगी, यह मानी हुई बात है। मगर उसे भी आँखोंसे क्यों न देख लिया जाय? सचमुच यही सिद्धान्त ठीक है कि—

गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णुर्गुरुर्देवो महेश्वरः।

(३)

इस घटनाके बाद बारह सालतक मौन रहकर नन्दनजीने घोर तपस्या की। शीतकालमें जलमें खड़े होकर और ग्रीष्मकालमें पञ्चधूनी तपकर एवं वर्षाकालमें वर्षामें खड़े होकर उन्होंने **'नमः शिवाय'** का अखण्ड जप किया। भूख, प्यास, मृत्यु और जीवन—इन चारों शङ्काओंको उन्होंने त्याग दिया। नन्दनजी सिद्ध हो गये। जगत्को सुखी बनानेके लिये तराईमें उतर गये। जिसे जिस कामके लिये अपने सिरका एक बाल तोड़कर दे देते, उसका भला हो जाता। लोगोंने कहा—'एक सिद्ध महात्मा प्रकट हुए हैं। अब भी कोई दुःखी रहे तो उसकी मरजी। चलो, एक-एक बाल ले आयें।'

चार-पाँच हजार आदमियोंने उनको घेर लिया। बाबाजीको बाल तोड़नेकी मशक्कत क्यों दी जाय, इस विचारसे पब्लिकने बाल उखाड़नेका काम अपने जिम्मे ले लिया। बाबाजी मूर्छित हो गये; क्योंकि सब लोगोंने जबरन् उनके बाल उखाड़ डाले। होशमें आते ही बाबाजी वहाँसे भागे और उसी चोटीपर चढ़कर बोले—'त्रिगुण त्याज्य है! इनकी तिकड़ममें कोई भूलकर भी न पड़ना।'



गुरु गुड़ ही रहे, चेला चीनी हो गया!

(१)

ज्यादा दिनोंकी बात नहीं। संवत् १९०० वि० की एक सच्ची और विचित्र घटना सुनिये। उस घटनाने यह कहावत प्रमाणित कर दी कि—

'गुरु गुड़ ही रहे, चेला चीनी हो गया!'

दक्षिणके एक शहरमें भगवान् श्रीकृष्णका मन्दिर है। महन्त थे उस समय बाबा धरमदासजी। एक दिन एक अहीरका लड़का उनके पास आया और उनका चेला हो गया। वह माता-पिताहीन एक बारह सालका लड़का था। वह अपने गाँवमें अपने काकाके पास रहता था। मगर उस कौए काकाने ऐसी 'कैं-कैं' लगायी कि लड़केको भागना पड़ा। लेकिन यदि काकाकी 'कैं-कैं' न होती तो न तो वह वहाँसे भागता और न विशाखापत्तनके मन्दिरका महन्त ही बन सकता। शहरके समस्त रईस, समस्त अहलकार और समस्त भक्त नर-नारी उस मन्दिरमें आया करते थे और मूर्तिके साथ ही महन्तको भी प्रणाम किया करते थे। इसीलिये यह सिद्धान्त माना गया है कि मालिककी अकृपामें भी कृपा छिपी रहती है। रोषके भीतर भी पोष रहता है। अस्तु, उस लड़केको नाम मिला गरीबदास। गरीबदासको दिनभर मन्दिरकी पाँच गायें वनमें चरानी पड़ती थीं। दोपहर और शामको बनी-बनायी रोटी खायी और पड़कर सो रहे। यही गरीबदासकी दिनचर्या थी। लिखना-पढ़ना कुछ नहीं। पूजा-बंदगी कुछ नहीं। दूध पीना और गायें चराना।

एक दिन आयी एकादशी। महन्तजीने गरीबदाससे कहा—'आज दोपहरको यहाँ मत आना, मेरा व्रत है' इसलिये भोजन शामको बनेगा। तुम आधा सेर आटा और बीस आलू लिये जाओ। दोपहरीको स्नान करना और वनकी कंडी बीनकर आग सुलगाना। पानीसे उस जगहको पवित्र कर देना। समझे?

गरीब—जी हाँ!

धरम०—अपने अँगोछेपर आटा गूँदना। मैं तुमको एक लौकीका कमण्डल दूँगा, उससे पानीका काम करना। समझे?

गरीब०—समझे।

धरम०—आध-आध पावके चार टिक्कर बनाना। फिर आलू भूनना। आज नमक नहीं खाना चाहिये। इसलिये नमक नहीं दूँगा। समझे?

गरीब०—समझे। तो अपने आलू भी अपने पास रखिये। समझे?

बाबा धरमदासका तकिया-कलाम था—'समझे।' चेला गरीबदासने भी वही तकिया-कलाम स्वीकार कर लिया। इस हरकतपर बाबाजी नाराज नहीं हुए, किंतु प्रमुदित हुए कि चेलाने एक बात तो सीखी।

धरम०—पागल है क्या? नमकहीन आलू और भी अच्छे लगते हैं। सोंधापन मिलता है। समझे?

गरीब०—समझे।

धरम०—जब भोजन बन जाय, तब अपने गलेका हीरा उतारना। समझे?

गरीब०—समझे। हीरा कैसा। समझे?

धरम०—जिस दिन तुझे चेला किया था, उस दिन तेरे गलेमें एक शालग्रामकी मूर्ति, ताबीज बनाकर बाँध दी थी, उसीको

हीरा कहते हैं और वह ताबीज है कहाँ? तेरा गला तो सूना है। समझे?

गरीब०—समझे। उतारकर फेंक दिया। समझे?

धरम०—बड़ा गधा है! कहाँ फेंक दिया? समझे?

गरीब०—छप्परमें खुरस दिया है। समझे?

धरम०—पूरा उल्लू मालूम पड़ता है। समझे? अबे, उसे फेंक क्यों दिया? समझे?

गरीब०—गलेमें पत्थर बाँधनेसे क्या फायदा? समझे? सोते समय कभी-कभी वह गलेके नीचे आ जाता था तो मालूम पड़ता कि जान गयी। समझे? मैं उसे नहीं पहनूँगा। समझे?

धरम०—अरे राम-राम, चेला है कि चैला! समझे? ले आ उसे मेरे पास समझे?

गरीबदास घबरा गया। कहीं वृद्ध साधु उसे उस नाहक पत्थरके लिये पीटने न लगे। यह सोचकर वह चटपट ताबीज खोज लाया और गुरुजीको दे दिया।

धरम०—देखो बच्चा! तुम अभी नादान हो। समझे? इस कपड़ेके भीतर शालग्रामजीकी मूर्ति है। समझे? मूर्तिके भीतर गुपालजी रहते हैं। समझे?

गरीब०—वही गुपालजी कि जिन्होंने 'बिनदाबन' में अवतार लिया था। समझे? मेरी ही जातिके थे—अहीर थे। दिनभर गायें चराया करते थे और मुरली बजाया करते थे। समझे?

धरम०—हाँ-हाँ वही। समझे? जब भोजन बना लो तब इस ताबीजको गलेसे उतारकर आगे रख देना और कहना कि 'गुपालजी! भोग लगाओ!' समझे? फिर तुम भोजन करना। समझे?

गरीब०—समझे।

धरम०—अच्छा, तो आ हीरा बाँध दूँ। समझे?

गरीब०—अहँ। समझे?

धरम०—कोई हरज नहीं है, समझे?

गरीब०—उहुँ। समझे?

धरम०—हठ नहीं करना चाहिये। समझे?

गरीब०—गलेमें नहीं बाँधूँगा। सोते समय कभी गुपालजीने मेरा गला टीप दिया तो! चोर आदमीको दूर ही रखना चाहिये। समझे? मेरी कमरमें बाँध दीजिये। समझे?

धरम०—हुश्! कमरमें नहीं, आओ बाजूमें बाँध दूँ। समझे? हाथ जोड़कर आँखें बंद करके भोग लगाना। समझे?

गरीबदासने अपना दाहिना हाथ आगे बढ़ा दिया। बाबाजीने वह ताबीज बाजूबंदकी तरह बाँध दिया। इसके बाद आधा सेर आटा और बीस आलू दिये। आधा पाव गुड़ इसलिये दिया कि बाबाजी उसकी बातोंपर खुश हो गये थे। इसके अलावा उसने उनका तकिया-कलाम कण्ठ कर लिया था। फिर एक तूँबा देकर कहा—जाओ बच्चा! हरेक एकादशीको ऐसा ही करना पड़ेगा। समझे?

गायें लेकर गरीबदासने नदीका रास्ता पकड़ा।

(२)

जब दोपहरी हुई तब गुरुजीके बताये विधानके अनुसार गरीबदासने चार टिक्कर बनाये। आलू भूनकर भुरता बनाया और चारोंपर थोड़ा-थोड़ा रख दिया। ढाकके पत्तोंसे एक पत्तल भी बना ली थी। उसीपर चारों टिक्कर रख दिये और मूर्ति भी रख दी। इसके बाद उसने अपने दोनों हाथ जोड़े और आँखें बंद कीं। फिर कहा—'गुपालजी! भोग लगाओ।'

आँखें खोलकर गरीबदासने देखा कि चारों रोटियाँ ज्यों-की-त्यों रखी हैं। एक भी कम नहीं हुई। यानी गुपालजीने भोग नहीं

लगाया। वह सोच रहा था कि कम-से-कम एक रोटी तो गुपालजी खा ही लेंगे।

उसने फिर नेत्र बंद किये। फिर वही प्रार्थना की। मगर टिक्करोंमें कमी न हुई। गरीबदासने प्रतिज्ञा की कि जबतक गुपालजी भोग न लगायेंगे तबतक वह भोजन न करेगा। गुरुजीकी आज्ञा भी ऐसी थी। ऐसा मुमकिन नहीं कि भोग लग जाय और भोजनमें कोई कमी न आये।

दोपहरके ग्यारह बजेसे गरीबदासकी यह हरकत शामके चार बजेतक जारी रही। गुपालजीने देखा कि गरीबदास वज्र मूर्ख है। गुपालजी प्रकट हो गये। वे या तो वज्र पण्डितके सामने प्रकट होते हैं या वज्र मूर्खके। बीचवाले यों ही मुँह उठाये बैठे रहते हैं।

अबकी बार गरीबदासने जो नेत्र खोले तो देखता क्या है कि एक बारह सालका लड़का बैठा हुआ एक टिक्कर खा रहा है।

गरीब०—गुपालजी! तुम बड़े सुघर हो। जी चाहता है कि चिपटके रह जाऊँ। मगर, हो कठोर भी बहुत। समझे? मार डाला मुझे भूखसे। तब प्रकट हुए। समझे? पहले ही बुलावेमें आ जाते तो क्या जात घट जाती। समझे?

मुसकराकर गुपालजीने कहा—'अब पहले ही बुलावेमें आ जाया करूँगा।'

चटपट एक टिक्कर खतम करके गुपालजी खड़े हो गये और बोले—तुम भूखे तो नहीं रह जाओगे?

गरीब०—नहीं! एक टिक्कर ज्यादा था। समझे?

गुपालजी—लेकिन अबकी बार मेरे साथ राधाजी भी आयेंगी। तुम्हारे लिये दो ही टिक्कर बचेंगे। समझे?

गुपालजी अन्तर्धान हो गये। गरीबदासने भोजन किया और

अपना काम करने लगा। उसकी खुराक आध सेरकी थी। आज वह कुछ भूखा रहा था।

(३)

फिर एकादशी आयी। बाबाजीने आटा दिया, तब गरीबदासने कहा—पहली एकादशीमें अकेले ठाकुरजी आये थे। अबकी बार ठकुरानी भी साथ आयेंगी, पाव भर आटा और दीजिये। समझे?

बाबाजीने सोचा कि भूखा रह गया होगा, इसलिये बकवाद कर रहा है। बेपरवाहीके साथ तीन पाव आटा तौलकर दे दिया। आलू भी तौलकर दे दिये। बाबाजीने उसकी बात समझी नहीं, सुनी ही नहीं। सुनी तो दिल्लगी मानी।

दोपहरको फिर वही लीला हुई। छः टिक्कर थे, सबपर नमकहीन आलूका भुरता रखा था। ज्यों ही ठाकुरजीको बुलाया गया त्यों ही ठकुरानीसहित आप आ गये। दो टिक्कर भोगमें ही चले गये।

गुपाल०—भूखे तो नहीं रहोगे गरीबदास!

गरीब०—उस दिन तो तीन ही टिक्कर बचे थे और आज चार बचे हैं। भूखा नहीं रहूँगा। समझे?

गुपाल०—परंतु अबकी एकादशीमें सेरभर आटा लाना। नहीं तो भूखे रह जाओगे। समझे?

गुपालजी चले गये। गरीबदास भोजन करने लगा। उसने गुपालजीकी बात नहीं याद रखी; क्योंकि वह इस बातको समझ नहीं सका था। दिल्लगी समझी थी।

फिर एकादशी आयी। गरीबदासने तीन पाव आटा लिया था, इसलिये छः टिक्कर बने थे। भोग लगाया गया। ठाकुरजी और ठकुरानीजीके साथ दो मूर्तियाँ और भी पधारीं। सत्यभामा और रुक्मिणीजीसहित चारोंने चार टिक्कर उठा लिये। अपने लिये दो

ही टिक्कर देख गरीबदास मसोसकर रह गया। उसने सोचा ठाकुरजीकी ठकुरानियोंका अन्त नहीं है क्या?

जब सब लोग खा-पी चुके तब हँसकर गुपालजीने कहा— 'कहो गरीबदास! मैंने कहा नहीं था कि आटा सेर भर लाना। खैर अबकी एकादशीपर डेढ़ सेर आटा लाना।' समझे?

गरीब०—सो क्यों, समझे?

गुपाल०—मेरे दो सखा भी आना चाहते हैं—मनसुखा और श्रीदामा। वे तो अभी आ रहे थे, कहते थे कि गरीबदासको देखेंगे कि कैसे भोग लगाता है। समझे?

गरीब०—उनको लानेकी जरूरत नहीं। मैं ठाकुरजीको भोग लगाता हूँ या ठाकुरजीके खानदानभरको। समझे?

गुपाल०—समझो चाहे न समझो! अबकी बार आटा ज्यादा लाना। समझे?

इस लीलाद्वारा भगवान् महन्त धरमदासकी आँख खोलना चाहते थे। इस मर्मको गरीबदास कैसे समझ सकता था। वह चुपचाप भोजन करने लगा। ठाकुरजी अपनी पार्टीके सहित गोलोक चले गये।

(४)

धरम०—बेटा गरीब! आज फिर एकादशी है। समझे?

गरीब०—रोज-रोज एकादशी खड़ी रहती है। समझे?

धरम०—तुम्हें क्या तकलीफ होती है। समझे?

गरीब०—जिसपर बीतती है वही जानता है। समझे?

धरम०—क्या तुम भूखे रहते हो? तीन पाव खा जाते हो? यहाँ तो तुम दोपहरीमें आधा सेर ही खाते हो। वनमें तीन पावमें भी भूखे रहते हो! समझे? क्या आटा बेचने लगे हो। समझे?

गरीब०—मैं ही सब खा जाता हूँ क्या? ठाकुरजीके भोगमें

कुछ खर्च नहीं होता है। समझे? कभी दो जने आते हैं, कभी चार आ जाते हैं। अबकी बार छः प्रानी आयेंगे। डेढ़ सेर आटा दीजिये, नहीं तो मैं गाय चराने नहीं जाऊँगा। आपकी चें-चेंसे तो कक्काकी 'कैं-कैं' ही भली थी। समझे?

धरमदासने डेढ़ सेर आटा दे दिया और स्थिर किया कि आज खुद दोपहरीमें छिपकर देखेंगे कि वह आटेको फेंकता है या बेचता है या क्या माजरा है?

भनभनाता हुआ गरीबदास जंगलकी तरफ चला गया।

दोपहरी हुई। महन्त धरमदास छिपकर वहाँ जा पहुँचे जहाँ गरीबदास टिक्कर बना रहा था। एक झाड़ीमें पीछेकी तरफ बैठ गये। गरीबदासने बारह टिक्कर बनाये थे। आटा बचाया नहीं था। सब रोटियोंपर थोड़ा-थोड़ा आलूका भुरता रखा था। जरा-जरा सी मिठाई भी सबके साथ रख दी गयी थी। दोनों हाथ जोड़कर ज्यों ही गरीबदासने भोग लगाया त्यों ही यह क्या—

धरमदासने देखा कि सोलह हजार रानियोंसहित, आठ महारानियोंसहित, तीन सखाओंसहित मुरलीधर प्रकट हुए। सबने सब रोटियाँ टुकड़े-टुकड़े कर खा डालीं। उस दिन गरीबदासको कुछ भी न बचा। सोलह आना एकादशीको सामने देख वह बेचारा अकबका गया। धरमदासका शरीर पसीने-पसीने हो रहा था। भोग या सर्वस भोग लगाकर नटवर तो रासलीला करने लगे। सब लोग नाचने और गाने लगे। गरीबदासने कहा—'मैंने पहले ही कहा था कि चोर आदमीसे दूर ही रहना चाहिये।' समझे?

थोड़ी देर बाद वह परस्तान गायब हो गया। कहीं कुछ नहीं। मनमारे बैठे हुए गरीबदासके पैर पकड़कर धरमदास रोने लगे। यह नयी आफत देख बेचारा गरीबदास और भी घबरा गया और उछलकर दूर जा खड़ा हुआ।

धरम०—धन्य हो महाराज! जो तुमको साक्षात् दर्शन होते रहे और साक्षात् भोग लगता रहा। हाय, मुझे तो जीवनभर पूजा करते हो गया। कभी सपनेमें भी अपने गुपालजीको न देखा। आजसे मैं चेला और आप गुरु। समझे?

गरीब०—आप कहते क्या हैं? समझे? आप तो कहते थे कि मैं आटेको बेचता हूँ। समझे?

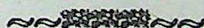
धरम०—समझे! मैं पापी हूँ। मैं अपने प्रभुद्वारा त्यागा गया हूँ। समझे? मुझसे कहीं ज्यादा आपकी पहुँच है। अब मन्दिरपर चलो आजसे आप महन्त हुए और कलसे मैं गायें चराया करूँगा।

गरीबदास और गायोंको साथ लेकर धरमदासजी मन्दिरपर गये। गरीबदासके बहुत रोकनेपर भी उसे महन्ती दे दी गयी। दूसरे दिनसे धरमदासजी गायें चराने लगे।

शहरवालोंको जब यह घटना मालूम हुई तो उनके हृदयमें भगवान् श्रीकृष्णका विश्वास कहीं ज्यादा बढ़ गया।

इस घटनापर पब्लिकने कहा—

'गुरु गुड़ ही रहे, चेला चीनी हो गया।'



भगत रबिदास

आगरा प्रान्तके दासपुर ग्राममें एक चमारके घर भगत रबिदासजीका जन्म हुआ। घरमें माता नहीं थी। पिता, बड़ा भाई और आप—ये ही तीन प्राणी थे। इनको शिक्षा मिली जूता बनाना। अपढ़ होनेपर भी इनकी समझ ऐसी पवित्र और कीमती थी कि जिसकी याद करके मुझ-जैसे आठ कलम पास नवयुवक भीतरसे जाग उठते हैं।

जब रबिदास बारह सालके हुए, पिताने दो-दो रुपयेके पाँच जोड़े जूते बाजारमें बेच आनेके लिये आपको दिये। शामको आकर बापके हाथमें आपने पूरे आठ रुपये रख दिये। अङ्कगणितकी नजरसे दो रुपये गैरहाजिर पूछनेपर मालूम हुआ कि एक गरीब लकड़हारेको काँटे निकालते देख एक जोड़ा इनायत कर दिया। पिता चार आना नाराज हुआ। भाईने सोलह आना नाराजगी प्रकट करते हुए एक तमाचा इनाम दिया। रबि रो पड़े। अपनी याद कर नहीं, काँटे निकालनेवालेकी यादसे। क्योंकि वह करुणाका पात्र न था। सच है, जो करुणाको नहीं जानता, वही भक्तिको भी नहीं पहचानता।

सोलह सालकी उम्रमें आपको स्त्री मिली। एक दिन फिर सात जोड़ी जूते देकर आप बाजार भेजे गये। चौदहकी जगह ग्यारह रुपये लेकर आये। पूछनेसे ज्ञात हुआ कि तीन जोड़े जूते दिये गये आधे दामोंमें। कारण, वही गरीबीकी करुणा।

पिता और भाईने मिलकर आपको अलहदा कर दिया। दिया

गया—एक सूजा, एक रापी और छः रुपये नकद। आपने इस अन्यायके खिलाफ राजाके इजलासमें फरियाद नहीं की। एक घूरेके पास झोपड़ी डाली और स्त्रीसमेत वहीं रहने लगे। एक तोता उर्फ गंगाराम भी पाल लिया। काम वही, परंतु गरीबोंको कम दाममें और अमूल्य जोड़ा दे डालना जारी रहा। गरीबपरवर स्त्री भी कुछ बाधा नहीं देती थी।

होते-होते बारह साल बीत गये। एक दिन भगवान् लक्ष्मीनारायणने सोचा कि रबिदास सचमुच एक भक्त है। एम्० ए० की तरह भक्तिका इम्तहान भी बारह साल बाद सामने आता है। भगवान्— संसारके संरक्षकने सोचा कि यदि रबिदासको धन दे दिया जायगा तो वह धर्मकी ही उन्नति करेगा, पापकी तरक्की नहीं।

जब बादशाह किसी प्रजाके मकानपर खुफिया जायँगे, तब अपना वेश बदल लेंगे। इसी कानूनके अनुसार भगवान्ने अपनेको एक ब्राह्मण-सा बना लिया ताकि जगत्की आँखोंमें धूल छायी रहे।

फागुनका महीना था। सरसों फूल रही थी। झोपड़ीके बाहर गंगाराम अपने पिंजरेकी कील खींच रहे थे। तीतर पालतू यानी परतन्त्र बन सकता है, तोता नहीं! रबिदासकी स्त्री एक ओर बैठी अपनी फटी चुनरी सी रही थी। एक ब्राह्मण आकर चुपचाप खड़ा हो गया। रबिदास भगत अपना काम नीची नजरके साथ कर रहे थे और गाते जाते थे—

सुरति बिरहुलिया छाई निज देस॥
जहाँ न गरमी जहाँ न सरदी,
तहाँ बसंत हमेस।
सुरति बिरहुलिया छाई निज देस॥ १॥

वहाँ न मूरत
वहाँ न सूरत
पूरन धनी दिनेस।
सुरति बिरहुलिया
छाई निज देस॥ २॥

यह वह गीत था कि जिसने ब्रह्मरूप ब्राह्मणको भी समाधि दे दी। ब्राह्मण बैठ गया। रबिदासने देखा। वर्ण-व्यवस्थाकी रक्षा करते हुए चमारने ब्राह्मणके चरणोंमें नमस्कार किया।

वर्तमानकी बाबू पार्टीवाले अपने नमस्कारपर कम ध्यान देते हैं और नमस्कृत व्यक्तिके आशीर्वादपर अधिक। उस युगमें नमस्कारके बदलेंमें कभी-कभी मारतक पड़ जाया करती थी। जो कलियुगमें घोर असभ्यता है। भगतको भगवान्‌ने कोई आशीर्वाद न दिया; क्योंकि वे साकार आशीर्वाद देने आये थे।

भगवान्—रबिदास!

भगत—महाराज!

भगवान्—मैं तुमपर हर तरहसे प्रसन्न हूँ। तुम्हारी क्या इच्छा है?

भगत—दे दो मुझे भगति, जिसे पा जानेसे फिर किसी चीजकी लालसा ही नहीं रहती।

भगवान्—वह तो स्वयं तुमने अपने ही पुरुषार्थसे प्राप्त कर ली। अब मैं तुमको अपनी ओरसे एक चीज देता हूँ।

भगत—जैसी मरजी!

भगवान्—देखो, यह एक छोटा-सा पारस है। विष्णुभगवान्‌ने मेरे द्वारा तुम्हारे पास भेजा है। रोज दोपहरको स्नानकर एक छटाँक लोहा इसमें छुआ देना, सोना हो जायगा। इस कामको छोड़ देना। अपने लिये एक हवेली और गरीबोंके लिये एक

धर्मशाला बनाना। गाँवमें अन्नसे कोई दुःख न पाये! धनसे धर्म भी होता है, बड़ा भारी पाप भी। तुम धर्मकी सड़क कभी मत छोड़ना।

भगत—आपकी दयाका क्या कहना। नहीं तो, कोई काहेको 'दीनबन्धु' कहता? इस समय मैं अशुद्ध हूँ। आप अपने इस पारसको कपड़ेमें लपेट छप्परकी बतरमें खोंस दीजिये। दोपहरीमें जब स्नान करूँगा, तब याद रहा तो उठाकर ठाकुरजीकी पिटारीमें रख दूँगा।

ब्राह्मणने वैसा ही किया।

होते-होते बारह साल बीत गये। तब लक्ष्मीके व्यवस्थापकने सोचा कि आज चलकर भगत रबिदासका चमत्कार देखना चाहिये कि क्या-क्या किया और क्या-क्या न किया।

रबिदासने देखा कि वही ब्राह्मण सामने हैं। चमारने फिर ब्राह्मणको नमस्कार किया।

भगवान्—भगतजी!

भगत—महाराज!

भगवान्—वह पारस खो दिया या सोना नहीं बना अथवा कोई उसे चुरा ले गया? तुम्हारा तो वही हाल है। वही घूरा, वही झोंपड़ी।

भगत—जहाँ आप रख गये, वहीं देखिये।

भगवान्—(देखकर) सचमुच यह तो जैसे-का-तैसा रखा है। इसे छुआतक नहीं गया भगत!

भगत—महाराज!

भगवान्—मैं तो समझता था कि मैं ही परमात्माका एक बड़ा भारी भगत हूँ, लेकिन तुम तो मुझसे भी बढ़कर निकले! अब मुझे जरा अपना चरण तो छू लेने दो।

रबिदास—मैं चमार हूँ!

नारायण—लेकिन मैं गँवार हूँ!

रबिदास—सो कैसे?

नारायण—अभिमान हर हालतमें बुरा है, फिर चाहे वह विद्याका अभिमान हो या अविद्याका। मुझे विद्याका अभिमान है और तुमने दोनों अभिमानोंका बहिष्कार कर दिया। इसलिये तुम्हारी भक्तिकी कीमत मेरी भक्तिकी कीमतसे ज्यादा है। मैं पारसकी इज्जत करता हूँ, तुम पारस और पत्थरको एक-सा देखते हो।

रबिदास—मैं चमार, आप ब्राह्मण!

नारायण—मैं ब्राह्मण, तुम महाब्राह्मण।

रबिदास—यह देखिये, मेरा मस्तक पारस है।

इतना कह भगतने लोहेकी रापीसे ज्यों ही अपने मस्तकका पसीना पोंछा, त्यों ही वह काले लोहेसे पीला कुन्दन बन गयी। उसे कुएँमें डाल, वह दूसरी रापीसे काम करने लगा। ब्राह्मणने आकाशकी ओर हाथ जोड़कर कहा—'हे अलख परमात्मन्! आप इसी प्रकार हम-जैसे अपने अफसरोंका मद चूर करते रहा करें।

रबिदास—धन्य हो महाराज!

ब्राह्मण—रबिदास भगतको मेरा नमस्कार है।



भगवान् विष्णुजी सदा विराजमान रहते ही हैं। मौजीके प्राणका खटका सिंहासनपर पहुँचा। भगवान्‌ने देखा तो एक अहीरका लड़का नाक दबाये जंगलमें बैठा है। कारण जो पूछा तो मायाने पण्डितजीवाली कहानी समझा दी। लक्ष्मीके नामसे भगवान्‌के पास योगमाया सदा हाजिर ही रहती है। भगवान्‌ने सारा माजरा जानकर सोचा कि मौजीकी मौत अभी आयी नहीं, जो वह मर जायगा; इसलिये उसे दर्शन देना चाहिये। भगवान्‌ने मौजीके सामने प्रकट होकर कहा—'आँखें, खोलो। मैं आ गया।'

आवाज सुनकर मौजीने आँखें खोलीं और नाक भी छोड़ दी। कुछ देर साँस लेकर वह बोला—आप कौन हैं?

भगवान्—भगवान् हूँ।

मौजी—इसका क्या सबूत कि आप ही भगवान् हैं?

भगवान्—तुम जैसा चाहो सबूत ले लो।

मौजी—मैं उन पण्डितजीको बुलाये लाता हूँ, अभी वे बहुत दूर नहीं गये होंगे। अगर पण्डितजी कह देंगे कि तुम्हीं भगवान् हो तो मैं मान लूँगा; क्योंकि उन्होंने भगवान् देखे हैं, मैंने तो कभी देखा नहीं।

भगवान्—अच्छी बात है।

मौजी—लेकिन जबतक मैं पण्डितजीको लेने जाऊँ तबतक कहीं अगर आप खिसक गये तो?

भगवान्—नहीं, मैं यहीं खड़ा रहूँगा।

मौजी—अनजाने आदमीका क्या विश्वास? मैं आपको रस्सीसे कसकर इस आमके वृक्षसे बाँध जाऊँगा।

भगवान्—अच्छा भाई, बाँध लो।

मौजी उठा। पाँचों गायोंकी रस्सियाँ खोलीं और उन सबको बाँधकर उसने तीस हाथ लंबा एक रस्सा तैयार किया। भगवान् बेचारे खुद ही आमके वृक्षसे सटकर जा खड़े हुए। मौजीने

बेकलक तरीकेसे उनको कसकर बाँध दिया। फिर वह दौड़ा। दो फर्लांग दौड़नेके बाद पण्डितजी दिखलायी पड़े। उसने चिल्लाकर कहा—'ओ पिंडीजी माराज! चलो देख लो कि तुम्हारेवाले भगवान् यही हैं कि कोई दूसरे? मैंने उनको आमके वृक्षसे बाँध दिया है।' पण्डितजीने आवाज सुनीं मगर मतलब कुछ भी न समझे। मुड़कर देखा तो वही लड़का दौड़ता आ रहा है कि जो नदी-किनारे मिला था। पण्डितजीने सोचा कि यह युवक है और मैं बूढ़ा हूँ। कहीं मेरा झोला छीनने न आता हो। पण्डितजी आगेको सरपटे। मगर मौजी था अपनी धुनका पक्का। उसने दौड़कर पण्डितजीका हाथ पकड़ लिया। लाचारीके कारण पण्डितजी वहाँ आये, जहाँ वह आमका वृक्ष था।

मौजी—देखो पिंडीजी! यही भगवान् हैं न?

पण्डितजीने बहुत इधर-उधर देखा। आमके वृक्षसे एक रस्सा लिपटा था और कहीं कुछ न था।

पण्डितजी—कहाँ हैं?

मौजी—दिनमें नहीं सूझता? वे कैसे बँधे हैं?

पण्डितजीने अपना पिण्ड छुड़ानेकी गरजसे झूठ ही कह दिया कि 'हाँ, यही हैं।' इसके बाद मौजी फिर बोला—'नजदीक जाकर देख लो, फिर कभी यह मत कहना कि ये वे नहीं हैं।'

पण्डितजीको भगवान् दिखायी नहीं दे रहे थे। परंतु उन्होंने कहा—'बस-बस, यही हैं यही।'

अब पण्डितजीकी छुट्टी थी। वे चल दिये। मौजीने रस्सा खोला। भगवान्के चरण छुए।

भगवान्—वह पण्डित मेरा भक्त नहीं है, वह तो पाखंडी है।

मौजी—तो आप पाखंडीको क्यों दर्शन देते हैं?

भगवान्—मैंने उसे कभी दर्शन नहीं दिया।

मौजी—वाह, वह कहता था कि मैं रोज दर्शन किया करता हूँ और अभी मेरे सामने वह आपको देख गया है।

भगवान्—उसने न तो आज देखा और न पहले कभी देखा था। वह झूठा है।

मौजी—लेकिन उनके झूठने मुझे सचसे मिला दिया। वे पाखंडी ही सही, परंतु मेरे गुरु हैं।

भगवान्—तुम क्या चाहते हो ? मेरा दर्शन व्यर्थ नहीं होता।

मौजी—मैं यह चाहता हूँ कि जब मैं नहाकर नाक बंद किया करूँ, तब आपका दर्शन हुआ करे।

भगवान्—ऐसा ही होगा।

मौजी—एक बात आपने अपनी खुशीसे दी। एक बात मेरे माँगनेसे दीजिये।

भगवान्—माँगो!

मौजी—जब पण्डितजी नाक बंद किया करें तब उनको भी दर्शन दिया करें।

भगवान्—तब तो वह भी सुधर जायगा; क्योंकि मेरा दर्शन पानेवाले मिथ्याचारी नहीं रह सकते। मौजी! तुम धन्य हो। तुमने अपने गुरुका उद्धार किया और अपना उद्धार किया। गुरु ही चेलेका उद्धार किया करते हैं, पर आज चेलेने गुरुका उद्धार किया।

(३)

एक साल बाद वही पण्डितजी फिर उसी मार्गसे निकले। मौजी पूर्ववत् गायें चरा रहा था। जब दोनोंने दोनोंको देखा, तब मौजी बोला—गुरुजी! प्रणाम।

पण्डित—गुरुजी! प्रणाम।

मौजी—आप मेरे गुरु हैं, क्योंकि आपने मुझे भगवान्‌से मिलाया।

पण्डित—आप मेरे गुरु हैं, क्योंकि आपने मुझे भगवान्‌से मिलाया।

मौजी—मैं अहीर हूँ और आप ब्राह्मण हैं।

पण्डित—आप ही ब्राह्मण हैं और मैं अहीर हूँ।

मौजी—मैं मूढ़ था,आपने पण्डित बनाया!

पण्डित—मैं पाखंडी था, आपने भक्त बनाया।

मौजी—जो हुआ सो हुआ। हम दोनों दोनोंके गुरु हुए और दोनों दोनोंके चेला हुए।

पण्डित—मैंने यजमानीका पेशा छोड़ दिया। तुम भी गाय चरानेका पेशा छोड़ दो।

मौजी—फिर क्या करोगे।

पण्डित—द्वार-द्वारपर रामनामका प्रचार करेंगे। तुम बजाया करना खँजड़ी और मैं बजाया करूँगा मजीरा।

मौजी—दोनों मिलकर भक्तिके भजन गाया करेंगे।

पण्डित—हाँ! रामनामके पवित्र जलमें खुद भी नहाया करेंगे और संसारको भी नहलाया करेंगे।

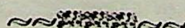
मौजी—नाम क्या रखोगे?

पण्डित—तुम्हारा नाम रहेगा—पण्डितदास और मेरा नाम रहेगा—अहीरदास।

मौजी—क्योंकि मेरा गुरु एक पण्डित है और आपका एक अहीर है।

पण्डित—हाँ!

गौहाटी जिलेमें दो साधु घूम-घूमकर भजन गाते हुए देखे जाने लगे। जब वे भजन गाते तो स्वयं मस्त हो जाते और सुननेवाले भी मगन हो जाते। भगवान्‌की लीला विचित्र है। भगवान्‌को धन्य है और उनके भक्तोंको भी धन्य है।



तबसे बैठा देख रहा हूँ फिर आनेकी राह!

उन दिनों हरद्वारमें अर्धकुम्भीका मेला था। मैं भी गया था। मैंने तीन दिनसे लक्ष्य किया कि एक सिपाही सरकारी वर्दीमें एक करीलके नीचे बैठा माला जपा करता है। तीसरे दिन मैं उसके पास गया। उसने हाथ जोड़कर 'जय सीताराम स्वामीजी!' कहा। मैं पास ही बैठ गया।

मैं—तुम किस टाइपके सिपाही हो जी?

वह—क्यों स्वामीजी!

मैं—सिपाहीके हाथमें माला! सिपाहीके हाथमें तो चाहिये भाला।

वह—क्या एक सिपाही भक्त नहीं बन सकता महाराज!

मैं—जो भक्त होगा, वह सिपाही नहीं बनेगा और जो सिपाही होगा, वह भक्त नहीं बनेगा। दोनों विपरीत अवस्थाएँ हैं।

वह—परंतु मुझमें दोनों बातें हैं।

मैं—देखो सिपाहियोंका जीवन। वे देखो, वे दो सिपाही गाँजेके दम लगा रहे हैं। वह देखो, एक सिपाही किसी गरीब यात्रीसे पैसे ऐंठ रहा है। उधर देखो, वे तीन सिपाही पुलपर आनेवाली युवतियोंको कैसे घूर रहे हैं, मानो विधाता-रचित सौन्दर्य-चन्द्रके राहु-केतु हैं।

वह—आप ठीक कह रहे हैं। आज हमारी सिपाहीकी कौम ही अधर्मी हो गयी है।

मैं—इधर तुमको देखो, सबसे अलग विरागीकी तरह माला जप रहे हो। किसका मन्त्र जप रहे हो?

वह—विष्णुभगवान्‌का।

मैं—मन्त्र किसने दिया?

वह—मेरे गुरुने!

मैं—तुम्हारा गुरु कौन है?

वह—मेरी स्त्री!

मैं—खूब विरोधाभासका जोड़ा?

वह—सो क्यों स्वामीजी!

मैं—एक तो सिपाही भक्त और दूसरे स्त्री गुरु!—ये दोनों ही विरोधाभास हैं। यानी सिपाही भक्त नहीं बन सकता; क्योंकि सिपाहीकी जाति आज जालिम हो गयी है और स्त्री गुरु नहीं बन सकती, क्योंकि औरतकी जाति मायाविनी होती है; परंतु तुम्हारे पास दोनों विरुद्ध बातें उपस्थित हैं। यही आश्चर्य है।

वह—कभी-कभी सिपाही भी भक्त बन जाता है और कभी-कभी स्त्री भी गुरु बन जाती है।

मैं—यह भी ठीक है। भगवान् असम्भवको भी सम्भव बनाया करते हैं। सम्भव-असम्भव और अन्यथासम्भव—ये तीनों हरकतें भगवान्में हैं।

वह—लक्ष्मणजीकी गुरु सुमित्रा देवी स्त्री जातिकी ही थीं। तुलसीदासजीकी गुरु रत्नावली स्त्री ही थीं और गोपीचन्दकी गुरु उनकी माता मैनावतीजी भी स्त्री ही थीं। इसी प्रकार मेरा गुरु स्त्री ही है।

मैं—तुम्हारा नाम!

वह—मुझे लोग ठाकुर जीवनसिंह कहते हैं।

मैं—कहाँके रहनेवाले हो?

वह—जौनपुर। यहाँ कुम्भभरके लिये मेरी ड्यूटी है।

मैं—अच्छा, तो जीवनसिंहजी! आप अपनी कहानी सुना जाइये।

× × × ×

जीवनसिंहने माला रख दी और कहने लगा—'आप नहीं मानते तो सुन लीजिये मेरी विचित्र कहानी!'

मैं—क्योंकि तुम्हारी कहानीमें अवश्य कोई अघट-घटना होगी।

जीवन०—अघट-घटना जरूर है! उसी घटनाने मुझे पागल बना दिया है।

मैं—कहो, क्या बात है? शायद मैं कोई सलाह दे सकूँ।

जीवन०—इसलिये सुनाता हूँ कि शायद आप कोई रास्ता दिखलायें। बात यह है कि मैं पक्का सुधारक था। सबका खण्डन करता था और मेरी स्त्री थी परम श्रद्धालु, घोर सनातनधर्मी।

मैं—घोर सनातनधर्मी!

जीवन०—घोर नहीं, बल्कि घनघोर सनातनधर्मी।

मैं—इसके क्या मानी?

जीवन०—उसने आँगनमें तुलसीका वृक्ष लगा रखा था और एक मूर्ति शालग्रामजीकी रख दी थी कि जो उसके गुरु उसे दे गये थे। तुलसीके घरौंदेमें भगवान् विष्णुजीकी तस्वीर टँगी थी। रोज सबेरे उठकर वह स्नान करती और ठाकुरजीकी पूजा करती थी। रामायण पढ़ती और विष्णुसहस्रनामका पाठ करती। तब जाकर किसीसे बात करती थी।

मैं—उसका नाम क्या था?

जीवन०—वह मर नहीं गयी है। उसका नाम गोमती देवी है। तीन पुत्र तथा एक कन्याकी माता है।

मैं—अच्छा, आगे कहो।

जीवन०—एक दिन रातको मैंने उससे कहा कि कप्तान साहब मुझपर नाराज हैं। एक दिन सलाम नहीं किया, इसीसे नाराज हो गया है, मेरा तबादला उस पापीने अल्मोड़ा कर दिया है।

गोमती—अल्मोड़ा कहाँ है?

जीवन०—जहाँके हमारे मुख्य मन्त्री और प्रसिद्ध कवि दोनों पंतजी हैं। वह एक पहाड़ी जिला है। वहाँके लोग बड़े रूखे माने जाते हैं। यहाँसे बहुत दूर है। धरतीके छोरपर समझो।

गोमती—तो क्या करोगे?

जीवन०—इस्तीफा दूँगा!

गोमती—गुजर कैसे होगी?

जीवन०—खेती करूँगा। उत्तम खेती ही है। नौकरी तो निकृष्ट है।

गोमती—मत घबराओ! मैं अपने विष्णुभगवान्‌से प्रार्थना करूँगी। तुम्हारा तबादला मंसूख हो जायगा।

जीवन०—मैं कप्तानके पास जाकर तबादला रोकनेकी प्रार्थना कदापि नहीं करूँगा।

गोमती—मत करना।

जीवन०—फिर भी तबादला रुक जायगा?

गोमती—हाँ, रुक जायगा।

जीवन०—कैसे?

गोमती—विष्णुभगवान् रोक देंगे।

जीवन०—अरी भोली! विष्णुभगवान् कोई चीज नहीं।

गोमती—वाह, वाह। यह खूब कही!

जीवन०—ब्रह्मा, विष्णु और शंकरकी कल्पना पोंगापंथी सनातनियोंके सड़े दिमागकी की हुई है। हमलोग कल्पनाके पीछे नहीं दौड़ते, सचाईको अपनाते हैं, जो सदा हमारे सामने होती है। विष्णुको किसने देखा है? असलमें विष्णु नामक कोई चीज इस संसारमें नहीं है। कोई परमात्मा है भी तो वह निराकार परमात्मा ही है!

गोमती—वही निराकार हैं, वही साकार हैं! वही ब्रह्मा नामसे साकार-द्वारा जगत्‌की रचना करते हैं, वही विष्णुभगवान्‌के रूपसे संसारका पालन करते हैं और वही परमेश्वर रुद्र—शंकरके साकारद्वारा संहार करते हैं।

जीवन०—(हँसकर) मैं यह तो मान ही नहीं सकता कि विष्णुभगवान् कोई चीज हैं। पर यदि विष्णु कोई थे तो अब बूढ़े हो गये होंगे या मर गये होंगे!

गोमती—नहीं, देवता न तो बूढ़े होते हैं और न मरते हैं। फिर वे तो देवोंके भी देव हैं। साक्षात् ईश्वर ही हैं।

जीवन०—मैं तो तब जानूँ कि विष्णुभगवान् ही जगत्के पालक हैं कि जब मेरा तबादला रुक जाय और मुझे कप्तानके सामने गिड़गिड़ाना न पड़े।

गोमती—ऐसा ही होगा।

जीवन०—यदि ऐसा हुआ तो मैं अपनी सुधारकीको भाड़में झोंक दूँगा और तुम्हारे सनातनधर्ममें आ जाऊँगा। इतना ही नहीं, तुमको गुरु मानूँगा।

गोमती—आज मैं प्रार्थना करूँगी।

जीवन०—कल प्रातः मैं इस्तीफा दे दूँगा, लिखा रखा है। इसलिये आज ही जो कुछ करना हो, कर डालना; क्योंकि परसों अल्मोड़ा जानेका हुक्म मिलेगा। पेशकार साहबने पक्की खबर दी है। हुक्म तबादला लिखा जा चुका है। साहबके दस्तखत भी हो चुके हैं। परसों मुझे दे दिया जायगा।

गोमती—आप निश्चिन्त होकर अपने पहरेपर जाइये।

× × × ×

मैं—क्यों जीवनसिंह! कप्तान साहब किस जातिका था?

जीवन०—अंग्रेज-बच्चा था मि० यार्क साहब! बड़े कड़े मिजाजका अफसर था। सुपरिटेंडेंट पुलिसको भी 'कप्तान' कहते हैं हमलोग!

मैंने कहा—अच्छा, फिर क्या हुआ?

जीवन०—मैं कलक्टरीपर पहरा देने जा रहा था। आधी रातका समय था। आधी रातसे प्रातःतक मेरी ड्यूटी थी। जब कचहरीके पास पहुँचा तो मुझे एक पण्डितजी मिले। मेरे कुलपुरोहित पण्डित दुलीचन्दको पहचानकर मैं खड़ा हो गया। सनातनधर्मी न होनेके कारण मैं तो उनको अपना पुरोहित नहीं मानता था, परंतु गोमती मानती थी और वह उनको बहुधा बुलाकर व्रतोंकी व्यवस्था किया करती थी। मुझसे उन्होंने कहा—

'मुझे तुम्हारे तबादलेका हाल मालूम है। कल सुबह इस्तीफा मत पेश करना। कल दोपहरको मंसूखी तबादलाका हुक्म मिल जायगा।'

इतना कहकर वे चले गये। मैंने उनकी बातपर कोई ध्यान नहीं दिया; क्योंकि ज्योतिषपर मुझे विश्वास नहीं था और वे एक ज्योतिषी थे।

मैंने पूछा—फिर सुबह इस्तीफा पेश किया?

जीवन०—मैंने इतनी बातें निश्चय कर लीं कि इस्तीफा सुबह नहीं, कल शामको दाखिल करूँगा। अपनी स्त्री तथा पण्डितजीकी बातकी जाँच भी तो करनी थी।

मैं—आगे कहो।

जीवन०—जब पहरा देकर मैं सुबह घर गया, तब अपनी स्त्रीसे ज्योतिषीवाली बात कही। वह बोली कि उसने भी प्रार्थना की थी। इसके बाद बड़े लड़केको भेजकर पण्डित दुलीचन्दजी ज्योतिषीको मेरी स्त्रीने घरपर बुलाया और वे आये।

गोमतीने उनको सादर बैठाया और पूछा—'कल आधी रातको आपने ठाकुर साहबसे क्या कहा था?'

पं० जी—कुछ नहीं।

जीवन०—आप कल आधी रातको कचहरीके पास मुझे मिले थे या नहीं?

पं० जी—नहीं।

जीवन०—तब वह कौन था?

पं० जी—मुझे नहीं मालूम।

जीवन०—कल आधी रात आप कहीं गये थे?

पं० जी—कल रातको मैंने घरसे बाहर कहीं डग भी नहीं मारी!

जीवन०—मैं यह मान नहीं सकता, सिपाही हूँ, मुझे कोई चकमा नहीं दे सकता।

पं० जी—मेरे पास सबूत भी है।

जीवन०—कैसा सबूत?

पं० जी—मेरे घरके पास पण्डित शिवशंकरदयालुजी वैद्य रहते हैं।

जीवन०—मैं उनको जानता हूँ! कई बार दवा भी लाया हूँ।

पं० जी—उनको बुलवा लीजिये। वही मेरे गवाह हैं।

लड़केको भेजकर मैंने वैद्यजीको बुलवाया और वे आये। वैद्यजीसे मैंने कहा—'क्यों वैद्यजी! मेरी एक बातका जवाब आप सच-सच देंगे?

वैद्य—भय या लोभसे लोग झूठ बोलते हैं। मुझे आपसे न तो भय है और न लोभ।

जीवन०—आपको अपने पुत्रकी शपथ है, सच जवाब देना।

वैद्य—शपथ न देते तो भी सच बोलता, कहो क्या बात है?

जीवन०—कल रातको ज्योतिषीजी कहीं बाहर गये थे?

वैद्य—कल शामको मैंने भाँग बनायी थी। इनको जरा ज्यादा पिला दी थी। ये रातभर बेहोश पड़े रहे। इनकी स्त्री घबरा गयी थी। आधी रातको मुझे नाड़ी देखनेको बुलाया गया था। मैंने एक दवा देकर इन्हें कै करायी थी। मैं शपथसे कहता हूँ कि ये सुबहतक कहीं नहीं गये।

जीवन०—बस, अब आप दोनों साहब जा सकते हैं। वे दोनों चले गये।

दोपहरीको पेशकार साहबने मुझसे कहा कि 'तुम्हारे तबादलेका हुक्म मंसूख कर दिया गया। तुम जौनपुरमें ही रहोगे।' जब मैंने कारण पूछा तो उन्होंने जवाब दिया—'साहबोंके मनकी बात मैं क्या जानूँ।'

× × × ×

जीवन०—अब बताइये स्वामीजी! ज्योतिषीके रूपमें वह कौन था?

मैंने कहा—विष्णुभगवान् ही थे।

जीवन०—वे क्यों आये थे?

मैं—तुमने कहा था कि विष्णुजी मर गये, सो वे हाजिरी देने आये थे कि मैं अभी नहीं मरा हूँ।

जीवन०—लेकिन मैं तो मर गया। उसी समयसे मैं पागल हो गया हूँ। यदि मैं जानता कि विष्णुभगवान् ही ब्राह्मणके रूपमें खड़े हैं तो मैं उनके चरण पकड़ लेता। भक्तिका वरदान माँगता।

मैं—तुमको दर्शन हो गया। तुम धन्य हो! बड़े-बड़े भक्तोंको उनका दर्शन नहीं होता, फिर इस कलियुगमें तो और भी कठिन बात है।

जीवन०—मेरी स्त्रीने '**हरिःशरणम्**' वाला मन्त्र मुझे दिया। उसी मन्त्रको मालापर जपा करता हूँ और—

'तबसे बैठा देख रहा हूँ फिर आनेकी राह!'

मैं—इस प्रकार तुमको सुधारकीका भूत छोड़ गया।'

जीवन०—मैंने समझ लिया कि इस सुधारकीमें कुछ तथ्य नहीं है, केवल हठधर्मी ही है। ज्ञान तो इसमें नहींके समान है। यथार्थ ज्ञानसे इसका कोई सम्बन्ध नहीं है।

मैं—ठीक है।

जीवन०—क्यों स्वामीजी! अब क्या फिर दर्शन नहीं होंगे?

मैं—मैं क्या जानूँ? साहबोंके मनकी बात। यदि वे प्रसन्न हो जायँ तो प्रतिदिन दर्शन दे सकते हैं। प्रसन्न न हों तो सात जनम न मिलें। 'विष्णु भगवान् समान न आन!'

जीवन०—मैं प्रयत्न तो यही कर रहा हूँ कि एक बार फिर मिलें।

मैं—किये जाओ प्रयत्न मेरे प्यारे! यह प्रयत्न ही मनुष्य-जीवनका सबसे बड़ा फल है।

जीवन०—यही मेरे जीवनकी एक अघटन-घटना है।

मैं—खूब है भैया! तुम सचमुच अजीब सिपाही हो।



हिंदू राज्य कैसे गया?

(१)

बादशाह 'शाहेजहान' का दरबार लगा था। तीस करोड़के जवाहरातोंसे बने विचित्र 'तख्ते-ताऊस' पर बादशाह बैठे थे। दाहिनी तरफ वजीर दिलदारखाँकी गद्दी और बायीं तरफ सिपहसालार आजम (प्रधान सेनापति) सलावतखाँकी गद्दी थी। दोनों आसन सोनेके बने थे। तबतक राठौर राजा अमरसिंहजी दरबारमें आये और उन्होंने बादशाहको सलाम किया। इसके बाद न तो वजीरको सलाम किया और न सेनापतिको। वजीर था सूफी आदमी। किसने सलाम किया और किसने नहीं, इसकी छानबीन वह नहीं करता था। मगर सेनापतिकी आबरू चढ़ गयी, कमान तन गयी।

सेनापति—राजा साहब! आप आठ रोजकी छुट्टीपर गये थे। मगर आज सोलहवें रोज आप तशरीफ लाये हैं।

अमरसिंह—मैं राजा हूँ। जीमें जब आया, आया, नहीं तो नहीं आया!

सेनापति—आप राजा थे, तब थे। आज आप 'राजपूत लश्कर' के सेनापति हैं। आप मेरे मातहत हैं, मैं जवाब चाहता हूँ।

अमर०—जवाब?

सेनापति—हाँ, जवाब! जवाब!

अमर०—काम लग गया था।

सेनापति—जहाँपनाहके पास 'रुखसती दरख्वास्त' भेजना था या नहीं? मगर वहाँ तो 'बादशाही-इस्लामी' से इन्कार है। गुस्ताखी इसीको कहते हैं। क्यों वजीर साहब?

वजीर—हुआ क्या? जाने भी दो मेरे यार! राजा अमरसिंह साहब! आप ठीक कहते हैं। आप आजाद हैं। नौकरी तो दिलचस्पीके लिये है, न कि बवाले जान!' लानत ऐसी नौकरीपर! लानत है!

सेनापति—माफी हरगिज नहीं दी जायगी। राजा साहब! आपपर सात दिनके सात लाख रुपये जुर्माना किया जाता है। शामतक रुपये खजानेमें जमा कीजिये। तबतक आप दरबारके नजरबंद हैं। खबर भेजिये घर।

अमरसिंह—बादशाह सलामत! सेनापति क्या फरमा रहे हैं?

वजीर—वही तो मैं भी कह रहा हूँ। सलावत मियाँको न मालूम कौन-सा बुखार चढ़ आया है।

अमरसिंह—जहाँपनाह! इंसाफ कीजिये।

वजीर—इंसाफ तो साफ है।

आईना! मुँहपर ही कहता है—साफ-साफ।
सच यह है—जो साफ होता है—सफा कहता है।।

अमरसिंह—क्यों सेनापति! जुर्माना किया किसने और नजरबंद किसको कहते हैं?

वजीर—वही तो नजरबंदीका तमाशा हो रहा है। एक शायर कहता है—

सँभल कर बैठना, जलवा मुहब्बत देखनेवाले।
तमाशा खुद न बन जाना तमाशा देखनेवाले॥

सेनापति—जुर्माना किया मैंने। मैं सब सेनापतियोंका सेनापति हूँ। मैं सिपहसालार आजम हूँ। आपका अफसर हूँ।

वजीर—जुर्माना तो होना ही चाहिये। सात लाख न सही, सात रुपये ही सही। क्यों राजा साहब! क्या राय है? उस शायरने क्या खूब कहा है?

खुदाने हुस्न नादानोंको, बख्सा जर रजीलोंको।
अक्लमंदोंको रोटी खुश्क, औ हलुवा वखीलोंको॥

अमरसिंह—अगर मैं जुर्माना न दूँ?

वजीर—जहाँपनाह! जब उसके पास कुछ है ही नहीं तो वह कहाँसे दे? मत दो। एक पैसा मत दो। मैंने माफ किया।

सेनापति—आप माफ करनेवाले कौन? वह मेरे महकमेकी बात है।

वजीर—मैं तो अपने दिलमें यही गाता हूँ कि—

एक बुतको चूमनेको शेखजी काबा गये।
गरचे-हर बुत काबिले बोसा है इस बुतखानेमें॥

अमरसिंह—नजरबंदीके क्या मानी सेनापति?

वजीर—

नजरसे सर कलम कर दे, उसे शमशीर कहते हैं।
निशानेमें जो लग जाये, उसीको तीर कहते हैं॥

सेनापति—जबतक सात लाख रुपये आप जमा खजानाशाही न करेंगे, तबतक यहाँसे आप जा नहीं सकते।

अमरसिंह—और रातमें?

वजीर—रातमें इसी 'तख्ते-ताऊस' पर सोना। तीस करोड़के पलंगपर सो लो राजा अमरसिंह! सो लो! इतनी वेश-कीमती चारपाई, सोनेके वास्ते बेचारे बादशाहको भी नसीब नहीं। आज तुम जरूर सोना!

सेनापति—रातको जेलमें सोना होगा।

वजीर—एक रात मैं भी जेलमें सोना चाहता हूँ। तब आपके साथ ही चलूँगा राजा साहब! वाह क्या खूब कहा है—

न कह गया, न सुन गया और न नाम बता गया।
मैं क्या कहूँ कि मेरे दिल, किसने चुरा लिया॥

अमरसिंह—मुझे नजरबंद किया किसने?

सेनापति—दरबार और बादशाहने।

वजीर—दरबारकी तरफसे मुझे इनकार है। और खुदा हरा रखे! बादशाह तो बेचारे बोले भी नहीं। एक शायरने तो कलम तोड़ दी है—

इबादतकी इबादत है, मुहब्बतकी मुहब्बत है।
मेरे माशूककी सूरत खुदासे मिलती जुलती है॥

अमरसिंह—बादशाह सलामत! हुजूर! बोलते क्यों नहीं?

वजीर—नहीं बोलते। बोलनेमें तकलीफ नहीं होती!

शायरने यह बात भी कही है—

शेखजीसे मैंने पूछी, मंजिल जब यारकी।
बुतकदेकी और चुपकेसे, इशारा कर दिया॥

अमरसिंह—सात दिनतक मैं अपने गुरुजीके पास कजरीवनमें रहा, वहाँसे खत कैसे भेजता!

वजीर—शाबाश! देर आइद दुरुस्त आइद।

अमरसिंह—इसलिये गैरहाजिरी नहीं रही।

वजीर—सच है लड़के! शेर-बबरके बच्चे! किसी फकीरकी सात दिन खिदमत की तो क्या जुर्मानेका काम हुआ? नहीं, इनामका काम किया। लो, सात लाख मैं तुमको इनाम देता हूँ, यही सलावतको दे दो। खर्चकी कमी होगी, सात लाखकी थैली भीख माँग रहा है। फकीरके प्यारेपर जुर्माना न होगा, बल्कि फकीरपर जुर्माना होगा, मगर यह तुम्हारे हकमें बुरा होगा, सलावत भाई! तोबा करो। लानत है। गुस्सेको थूक दो। इधर सुनो, एक शायर इसी बातपर कहता है—

तमन्ना दर्ददिलमें हो, तो कर खिदमत फकीरोंकी।
नहीं वह 'लाल' मिलता है अमीरोंके खजानेमें॥

सेनापति—मैं कोई उज्र न सुनूँगा। शामतक सात लाख लाइये।

वजीर—वाह, क्या बात कही है। लाइये! 'ला' पढ़ा है 'द' नहीं। सच कहा किसी शायरने, अल्ला उसे बख्शे, वाकई खूब कहा है। मजा यह कि ऐन मौकेपर फिट होता है—

बहुत मुश्किल निभाना है मुहब्बत अपने दिलवरसे।
उधर मूरत अमीराना इधर हालत फकीराना॥

अमरसिंह—न मैं जुर्माना दूँगा और न मैं नजरबंद हूँ।

वजीर—आजादी है! जाओ बेटे! जाओ। नया गौना करा लाया है। सिर्फ महीनेमें पहलीको सलाम कर जाना। यहाँ कोई चढ़ तो आया नहीं कि जो सब सेनापति लोग जमा रहें। जाओ, सब सेनापति भाग जाओ। जब कोई काबुल-कंधार, अलख-बलाक, ईरान-तुरान, मक्का-मदीना या अमन-चमन चढ़ आयेगा, तब आप सब साहबान खुद बुला लिये जायँगे! जाइये, सबकी छुट्टी ! बेकार चीं-चीं मत करो।

सेनापति—बादशाह फरमा दें।

वजीर—बादशाह और वजीरमें इतना ही फर्क है कि वह सोलह आने हैं और यह चौदह आने।

सेनापति—क्या हुक्म होता है जहाँपनाह!

वजीर—जहाँपनाह यहाँ हैं कहाँ? वे ताजमहलमें होंगे। यहाँ तो उनका अकेला बदन 'गोबर गनेश' बना बैठा है। हाय बेगम! शायरने क्या खूब कहा है—

चाँद बदलीमें छिपा है मुझे मालूम न था।
सकल इनसानमें खुदा है, मुझे मालूम न था॥

बादशाह—क्या कहते हो सेनापति?

सेनापति—आपकी लापरवाहीसे ये काफिर लोग हमारी बराबरी करने लगे हैं।

'काफिर' का नाम सुनते ही अमरसिंहने तलवार म्यानसे निकाल ली। सलावत खाँका सिर काटकर जमीनपर डाल दिया। खूनका फव्वारा छूटने लगा।

यह हाल देख 'दरबार-रक्षक-सेना' आगे बढ़ी और अमरसिंह बादशाहकी तरफ झपटा।

वजीरने बादशाहका हाथ पकड़ा और खिड़कीकी राहसे महलमें घुस गया। भीतरसे खिड़की बंद कर दी। वहीं दोनों बैठ गये।

(२)

बादशाह—यह क्या हुआ वजीर?

वजीर—आप कहाँ थे?

बादशाह—ताजमहलमें। आप कहाँ थे?

वजीर—शायरीमें।

बादशाह—अमरसिंहने सलावतको मार डाला?

वजीर—बिलकुल! कतई जहाँपनाह!

बादशाह—मगर मेरी ओर क्यों झपटा था?

वजीर—कदमबोसी करने।

बादशाह—क्यों?

वजीर—गौना करा लाया है। इस पाक हिंदू कौममें एक यह कायदा है कि जब ब्याह-गौना होता है, तब दुलहा लोग माँ, बाप, गुरु और राजाके चरण छूते हैं—कदमबोसी करते हैं।

बादशाह—लाहौलविला कुव्वत! मैं समझा था कि मुझे मारने आ रहा है।

वजीर—मैंने आपको डरते देखा तो मैं उठा लाया। क्योंकि—

'रहमानके फिरश्ते' गो हैं बहुत मुकद्दस?
शैतानही की जानिब, लेकिन मिजोरटी है॥

बादशाह—वजीर!

वजीर—जहाँपनाह!

बादशाह—दरबारमें लड़ाई हो रही है।

वजीर—दरबारके तीन सौ सिपाही जबतक साफ न हो जायँगे तबतक लड़ाई होती रहेगी।

बादशाह—खिड़कीकी दरारसे ही दिखलाता है।

वजीर—मुझे बिना दरारके ही दिखलाता है। शायरने खूब कहा कि—

बुतपरस्ती मेरे हकमें हकपरस्ती हो गयी।
दे दिया तेरा पता कुछ, यारकी तसबीरने॥

बादशाह—वह सबको काट डालेगा।

वजीर—बेशक! एक शेरका बच्चा एक हजार भेड़ियोंके लिये काफी है।

बादशाह—बड़ा पानीदार है! बड़ा बहादुर है।

वजीर—बहादुरकी किताबमें अमरसिंहका नाम सोनेके पानीसे लिखा जायगा, क्यों जहाँपनाह! जब ऐसे बहादुर हिंदू मौजूद हैं, तब हिंदू-शाही क्यों खतम हुई?

बादशाह—सलावत-जैसे ही हिंदूकी मुहब्बतको इस्लामसे दूर किये हुए हैं, हिंदू-शाही क्यों गयी, यह आगे मालूम होगा।

वजीर—जी! वे दोनों चरत-भरत हैं। शायर कहता है—

मुहब्बत करो और निभा लो तब पूछना,
कि दुश्वारियाँ हैं कि आसानियाँ हैं?

बादशाह—सलावतने क्या कहा था?

वजीर—काफिर।

बादशाह—काफिर किसको कहते हैं?

वजीर—सुनिये—

वह काफिर है जो सिजदा न करे बुतखाना समझकर।

बादशाह—वजीर!

वजीर—जहाँपनाह!

बादशाह—हिंदू काबिले-दोस्ती हैं। वे इस्लामकी मुहब्बतकी आजमाइश लेना चाहते हैं।

वजीर—लेना चाहते हैं, तब देना चाहिये।

बादशाह—हिंदूको काफिर नहीं कह सकते। काफिर उसे कहते हैं कि जो खुदाको न मानता हो।

वजीर—इस्लाम कहता है, खुदा निराकार है; हिंदू कहता है कि निराकार-साकार दोनों है। मगर 'है' तो कहता है, 'नहीं' तो नहीं कहता।

बादशाह—हिंदू हमारी मुहब्बत चाहता है।

वजीर—

समझकर अपना दीवाना, वह मुझसे मुँह छिपाते हैं।
हकीकत यों है, दरपरदा, मुहब्बत आजमाते हैं॥

बादशाह—अब तो दरबारमें सन्नाटा है।

वजीर—बिलकुल कब्रस्तान कहिये, दरबार नहीं। कहा है कि—

शिकाइत किस जबाँसे मैं करूँ उनके न आनेकी।
यही अहसान क्या कम है कि मेरे दिलमें रहते हैं॥

बादशाह—अब भी अमरसिंहको मैं माफ करता हूँ।

वजीर—तभी 'माफी' है।

बादशाह—अमरसिंहको बुलाओ।

खिड़की खुल गयी। दोनों फिर अपने-अपने सिंहासनपर आसीन हुए।

(३)

वजीर—क्या कोई ऐसा है कि जो खातिरके साथ अमरको लिवा लाये?

अर्जुनसिंह—मैं उसका साला हूँ।

वजीर—जाओ। ले आओ। कहना—'बादशाहने बुलाया है। अर्जुन! तुमको एक लाख रुपया इनाम दिया जायगा।'

अर्जुनसिंह गया। अपनी बहिनको अपने पक्षमें करके, अमरसिंहको लिवा लाया। चूँकि फाटक बंद था, इसलिये खिड़कीसे निकलना हुआ। पहले अर्जुनसिंह निकला और उसने तलवार नंगी की। ज्यों ही अमरसिंहने खिड़कीमें अपना सिर डाला, त्यों ही अर्जुनसिंहने उसका सिर काट लिया। कटा हुआ सिर बादशाहके कदमके पास रखकर अर्जुनसिंह खड़ा हो गया।

बादशाह—यह किसका सिर है।

अर्जुन—बादशाहके दुश्मन और इस्लामके दुश्मन, पाजी अमरसिंहका सिर है गरीबपरवर!

बादशाह—किसने मारा?

अर्जुन—मैंने मारा! यह सोचकर मारा कि आप बहुत ही खुश होंगे।

बादशाह—मैं तो बहुत नाखुश हुआ। बहुत ही नाखुश हुआ नालायक!

वजीर—नाखुशीकी बात ही हुई, क्यों मारा? कहा किसने था कि मार डालना। यह कहा था कि दम-दिलासा देकर लिवा लाओ। तुमने यह कैसे जान लिया कि उसे सजा दी जायगी। सजा नहीं दी जाती, मजा दिया जाता। उसे प्रधान सेनापति बनाया जाता। उसे खिलअत दी जाती। क्यों मारा? अपनी बहिनको अपने हाथसे बेवा किया।

बादशाह—मेरी आँखोंमें आँसू भर आये। जिस दिन बेगम मरी थी, उस दिन आँसू आये थे। उसके बाद आज आँसू छलके!

वजीरने अपनी तलवार खींच ली और वे अर्जुनसिंह गौड़को जानसे मार डालनेके लिये झपटे, मगर बादशाहने हाथ पकड़ लिया और कहा—

'अपनी तलवार सियारपर चलाओगे?

वजीर—नहीं चलाऊँगा जहाँपनाह! नहीं चलाऊँगा। सियार है। मगर इसका मुँह काला करके गदहेपर बिठाकर आगरेभरमें घुमाऊँगा।

बादशाह—यही काफिर है।

वजीर—सच है, अमरसिंह काफिर नहीं, अर्जुनसिंह काफिर है।

बादशाह—एक हिंदू अमरसिंह!

वजीर—और एक हिंदू अर्जुनसिंह!

बादशाह—आपने पूछा था कि हिंदू-शाही कैसे गयी?

वजीर—पूछा था जहाँपनाह! आपसे नहीं पूछूँगा तो किससे पूछूँगा? जरूर पूछा था मालिक! हिंदू राज्य क्यों गया?

बादशाह—अब समझ गये कि कैसे हिंदू-शाहीको तबाही हासिल हुई? अब जान लिया कि हिंदू राज्य कैसे गया?

वजीर—समझ गया, जान लिया जहाँपनाह!

बादशाह—इन जयचन्दी सूरतोंने ही हिंदूमूरतको तोड़ डाला है। हिंदू ही बुतशिकन हैं।

वजीर—और कहने यह लगे कि मुसलमानोंने मूरत तोड़ी। कहा है—

दुनियाँ इक इफसाना कहने को थे मगर सोचा।
दुनियाँ है खुद इफसाना, इफसानेसे क्या कहना?



प्रभुकी अहैतुकी कृपा

(१)

फतहगढ़के सेठ रामगोपालजीका नियम था कि जबतक किसी अतिथिको भोजन न करा लेते, तबतक स्वयं भोजन न करते थे। वे एक भक्त साहूकार थे। लखपती सेठ थे; पर लक्ष्मीसे वे जलसे कमल-पत्रके समान विलग रहते थे। उनके दो लड़के थे। गृहलक्ष्मी थी। घरपर तीन नौकर रहते थे। एक नौकर जोधाका यह काम था कि वह प्रतिदिन किसी-न-किसी अतिथिको सेठजीके यहाँ भोजन कराने लिवा लाया करे। अतिथिके मानी यह कि वह फतहगढ़ शहरका निवासी न हो। कई अतिथि मिल जायँ तो और भी अच्छा, नहीं तो प्रतिदिन एक अतिथि मिलना अनिवार्य था।

एक दिन शामको चार बज गये, परंतु कोई अतिथि न मिला। जोधाने चार चक्कर शहरके लगाये, पर बेकार। अतिथि मिलते थे और जोधा उनको निमन्त्रण भी देता; पर कोई कुछ कह देता और कोई कुछ। एकने कहा—'मैं भोजन करके शहरमें आया हूँ।' दूसरेने कहा—'मेरे पास क्या कमी है कि जो दूसरेके यहाँ रोटी माँगता फिरूँ?' तीसरेने कहा—'जान न पहिचान, बड़े मियाँ सलाम! मैं तुम्हारे साथ चलूँ और तुम ले जाओ मुझे कहीं

गुंडोंके अड्डेपर। भोजन एक तरफ, जो कुछ मेरे पास लटू-पटू है, उसे भी छिनवा लो। अच्छा रोजगार सीखा है तुम्हारे मालिकने। लंबी काटो। मैं चकमेमें आनेवाला नहीं।'

बड़ी कठिनतासे एक महात्माको साथ लेकर जोधा हबेलीपर गया। महात्माजीको देखकर सेठजी बहुत खुश हुए और बोले—आइये महाराज! आपकी कुटी कहाँ है?

महात्मा—भागलपुर जिलेमें।

सेठ—आपका शरीर किस जातिका है?

महात्मा—ब्राह्मण।

सेठ—कितने दिनोंसे आप साधुई करते हैं?

महात्मा—तीस सालसे।

सेठ—अब आपकी क्या अवस्था है?

महात्मा—सत्तर सालकी।

सेठ—आपने सब तीर्थ किये होंगे?

महात्मा—हाँ।

सेठ—इधर किधर जानेका विचार है?

महात्मा—बिठूरके ब्रह्माजीका दर्शन करने जा रहा हूँ।

सेठ—आपने अनेक सिद्धोंकी संगत पायी होगी?

महात्मा—अवश्य।

सेठ—आप शिक्षित मालूम पड़ते हैं।

महात्मा—हिंदी, उर्दू, फारसी, संस्कृत, बंगला, गुजराती और गुरुमुखी जानता हूँ।

सेठ—धन्यभाग, जो आपके दर्शन हुए। अब आज्ञा कीजिये कि आपके लिये कच्चा खाना मँगवाऊँ या पक्का? दोनों प्रकारके भोजन ब्राह्मण रसोईदारके बनाये हुए तैयार हैं।

महात्मा—पक्का भोजन ठीक।

सेठजीके आज्ञानुसार एक पत्तलमें महात्माजीको पक्का भोजन परोसा गया।

बिना भोग लगाये ही महात्माजी भोजन करने लगे।

(२)

सेठ—आपने भोग नहीं लगाया?

महात्मा—कैसा?

सेठ—आपने परमात्माका नाम ही नहीं लिया। हिंदुओंमें कायदा है कि भोजन करते समय भगवान्‌को अर्पण करके भोजन करते हैं। मुसलमानोंमें कायदा है कि खाना खाते समय 'विस्मिल्लाह' कहते हैं।

महात्मा—यह सब ढोंग है।

सेठ—क्या आप परमात्माको नहीं मानते हैं?

महात्मा—कहाँ है परमात्मा? दिखलाओ!

सेठ—तो आप नास्तिक हैं?

महात्मा—जी हाँ।

सेठ—(झल्लाकर) नास्तिकको मैं भोजन नहीं दे सकता। राम! राम! आज महापाप हो गया। आप पण्डित नहीं, मूर्ख हैं। आप महात्मा नहीं, बदमाश हैं। आपका तीर्थगमन बेकार है। आपका सत्संग व्यर्थ है। आप पापी हैं, निशाचर हैं।

इतना कहकर सेठजीने जोधाको बुलाया। जब वह आया तो कड़ककर बोले—'क्यों रे! तुझे यही पाखंडी मिला था, जो ईश्वरको नहीं मानता? मैं इसकी सूरत नहीं देखना चाहता। इस महापापी राक्षसकी पत्तल उठाकर बाहर कुत्तोंको फेंक दे और इसे गरदन पकड़कर अभी मेरे मकानसे निकाल दे।

जोधाने बाबाजीपर धावा बोल दिया। उनकी पत्तल फेंक दी। बेचारे आधी ही पूड़ी खा पाये थे। कान पकड़कर उस नास्तिक बाबाको घरसे बाहर ढकेल दिया गया।

(३)

सेठजीने जोधाको फिर भेजा कि किसी आस्तिक अतिथिको ले आये। बेचारा फिर भागा। एक घंटे बाद जोधा लौटा। साथ थे एक बाबाजी। वे रामनामी कपड़ा ओढ़े थे। गलेमें तुलसी-माला लटक रही थी। मस्तकपर तिलक था। सेठने कहा—'यह अतिथि ठीक है!'

पूछनेपर बाबाजीने कच्चा भोजन माँगा। पत्तलें परोसी गयीं। बाबाजीने भोग लगाया। कहा—'धन्य भगवन्! जय हो गोपालजीकी। परमात्मा! आप बड़े दयालु हो। सेठजीकी जय हो। बाल-बच्चे हरे-भरे रहें। महिमा महा प्रसादकी पावो भोग लगाय। जय सीतारामकी, लक्ष्मीनारायणकी जय। गुरुजीकी जय। संत-सतीकी जय। दाताकी जय। जगद्‌गुरु दत्तकी जय।'

(४)

भोग लगाकर बाबाजी भोजन करने लगे। सेठजीने कहा—'इसी तरह भोग लगाया जाता है। इसी तरहके बाबाजी ठीक होते हैं। वह मनमुखा नास्तिक बड़ा पाजी था। पक्का भोजन चाहिये और ईश्वरका नाम लेते छाती फटती थी। जिसने इतना अच्छा भोजन दिया, उस प्रभुको धन्यवादतक नहीं! साधु काहेका, सवादू था।'

भोजन करके जब बाबाजी चलने लगे, तब सेठजीने एक रुपया नजर दिया। बाबाजी आशीर्वादकी वर्षा करके चले गये।

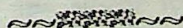
इसके बाद सेठजीने भोजन किया।

रातको सेठजीने रामायण तथा गीताका पाठ किया और विनयपत्रिकाके पद गाये। सब लोगोंने मिलकर संकीर्तन किया। सेठानी और बच्चे भी उस कीर्तनमें शामिल हुए। यह रोजका नियम था। इसके बाद ठाकुरजीकी आरती हुई।

जब रात ज्यादा हुई और सेठजी पलंगपर जा लेटे, तब उनके हृदयमें एक आकाशवाणी हुई—

'रामगोपाल! तुमने जिस नास्तिकको भूखा भगा दिया था, जानता है उसको आज मैं सत्तर सालसे लगातार भोजन देता आ रहा हूँ। तुम जिसका पालन एक दिन भी न कर सके, उसका पालन मैं सत्तर सालसे कर रहा हूँ। तुम मेरे कैसे भक्त हो?'

सेठजीने कहा—'प्रभो आप सबके परम सुहृद् हैं, हम सबपर अहैतुकी कृपा रखते हैं। मेरी गलती क्षमा कीजिये। वास्तवमें मुझसे भूल हुई। नास्तिक और आस्तिक दोनोंका पालन आप करते हैं। इसीको कहते हैं—'अहैतुकी कृपा।' आप सबपर निःस्वार्थ तथा हार्दिक स्नेह रखते हैं। बाप अपने नालायक लड़केको भी रोटी देता है।'



सिव चतुरानन जाहि डेराहीं

हनुमानगढ़ीके नागा—बालाजी मेरे परिचित थे। अब तो वे समाधि ले लिये; परंतु उनकी एक आप-बीती कहानी मुझे बार-बार याद आया करती है। उन्होंने एक दिन मेरी कुटीपर पधारकर यह विचित्र कथा सुनायी थी।

बालाजी अनाथ थे। पाँच सालकी आयुमें एक बाबाजीके साथ लग गये। जब बारह सालके हुए, तब बाबाजीने उनको हनुमानगढ़ीके किलेमें एक सिपाही बनाकर ढील दिया। चौबीस सालतक अखण्ड ब्रह्मचर्य साधकर और तत्कालीन महन्तकी गुरुदक्षिणा प्राप्तकर नागाजी देशाटनको निकले; क्योंकि देशाटनके बिना ज्ञान अनुभवके पदपर नहीं पहुँचता, वह पुस्तकीय ज्ञान रह जाता है।

घूमते-घामते वे नर्मदा-किनारे जा पहुँचे। वहाँ मिला एक योगी। उससे मित्रता हो गयी। दोनोंने एक साथ रहकर देशपर्यटन करनेकी ठानी।

× × × ×

जिला छत्तीसगढ़के एक गाँवमें वे दोनों जा पहुँचे। गाँवके बाहर शिवजीके मन्दिरपर डेरा डाला। ग्रामवासी नर-नारी, बालक आदि आकर दर्शन और सत्संग करने लगे। आजकल कोई योगी द्वारपर ठहर जाता है तो मूर्ख गृहस्थ उससे बहस करनेपर आमादा

हो जाता है। ज्ञान सीखना नहीं चाहता, वह अपना ज्ञान सिखाना चाहता है कि जो कुछ भी नहीं है।

रातको जब एकान्त हुआ तब दोनों मित्रोंमें बातचीत छिड़ी।

योगी—आप मायासे अभीतक बचे हुए हैं?

नागा—माया ससुरी है क्या चीज जो बचना पड़ेगा? स्वरूपरूपी हिमालयके सामने एक चींटी!

योगी—आपने स्वरूपका साक्षात्कार कर लिया? आप अपना सहजरूप पा गये? क्या आपने सनातन पुरुषको प्राप्त कर लिया?

नागा—निश्चय।

योगी—आपको माया कभी परास्त नहीं कर सकती?

नागा—सपनेमें भी नहीं। रातमें भी मैं रामपञ्चायतनकी पञ्चायतमें सोता हूँ, जहाँ बजरंगीका अटल पहरा है।

योगी—माया कहते किसे हैं?

नागा—कामिनी, काञ्चन और कीर्ति—इन तीन नदियोंकी त्रिवेणीको माया कहते हैं।

योगी—आप पक्के गुरुके चेले मालूम पड़ते हैं!

नागा—पक्के गुरुके होंगे आप, हम तो सच्चे गुरुके चेले हैं, जिन्होंने प्रत्येक तत्त्वके सारे बखिये खोलकर रख दिये।

योगी—आप कौन हैं?

नागा—जीव था, अब ईश्वर हो गया हूँ।

योगी—कैसे?

नागा—ईश्वरने अपने महलकी एक खिड़की मुझमें खोल दी है। अब वही वह है, मैं जो था सो खिड़की खुलते ही न मालूम कहाँ चला गया। ठीक अब समझा, वाह गुरुदेव! कैसी मार्केकी बात बतलायी। बतलायी नहीं, दिखलायी!

योगी—क्या बतलायी?

नागा—गुरुजीने बेतारके-तारसे इसी समय यह कहा था कि खिड़की खुलनेसे मन चला गया मायामें। मायाके मनभरका एक माशा मन तेरा मन बना घूमता था सो वह मायामें खिंच गया। डोरी लगी थी, खिंच गया पतंग-सा!

योगी—वाह, वाह-वाह! आज पक्के योगीके दर्शन हुए। धन्य भाग! आप छार-छार ईश्वर हो गये और मायाकी अब आपको कोई परवा नहीं।

नागा—अजी, माया है कहाँ जो परवा होती! मुर्दा है माया! इधरसे मत देखो, जरा उधरसे तो देखो। बेचारी चींटी—

चींटी चढ़ी पहाड़पर नौ मन तेल लगाय।
हाथी पकड़ बगलमें दाबे लिये ऊँट लटकाय॥

कबीर साहेबके इस रहस्यवादी दोहेका अर्थ अब खुला!

योगी—परंतु नागाजी महाराज! जरा ध्यान दीजिये कि रामायण क्या कहती है इस विषयमें।

नागा—किस विषयमें?

योगी—मायाके विषयमें।

नागा—क्या कहती है?

योगी—

सिव चतुरानन जाहि डेराहीं। अपर जीव केहि लेखे माहीं॥

नागा—यह तुलसीकी विमूढ़ता है। हम परमहंस लोग विधि-हरि-हर—तीनों देवोंसे ऊपरके लोकमें विचरण करते हैं। हमारे सामने माया बदमाशी करे तो तुरंत हम उसकी नाक काट डालें।

योगी—वाह गुरु! मैं माया देवीसे करबद्ध अनुरोध कर रहा हूँ कि वह अपनी शक्तिका कुछ नमूना हमारे इन परमहंसजीको

अवश्य दिखलानेकी कृपा करें।

प्रातः एक बूढ़ा आदमी, जो चन्दन लगाये था, दो लड़कोंके साथ वहाँ आया और दण्डवत् कर नम्रताके साथ दोपहरीका निमन्त्रण दे गया। योगियोंका धर्म है कि वे निमन्त्रण स्वीकार कर गृहस्थोंके गृह पवित्र किया करें।

दोपहरीमें दो लड़के आये, दोनों योगियोंको घर लिवा ले गये। पक्का सामान बनाया गया था। खूब आनन्दसे भोजन कराया गया। फिर ऊपरके हवादार कमरेमें दोनों महात्माओंको विश्राम करनेके लिये कहा गया। थोड़ी देर बाद एक लड़का आया और योगीजीको नीचे मालिक-मकानके कमरेमें लिवा ले गया। थोड़ी देरमें बालाजी सो गये।

मालिक—आइये महाराज! बैठिये, आपसे एक प्रार्थना है।

योगी—कहिये भगतजी!

मालिक—आपके साथ जो दूसरे योगी हैं, उनका और आपका साथ कबसे है?

योगी—कोई एक माससे।

मालिक—उससे पहले वे कहाँ थे?

योगी—हनुमानगढ़ीमें रहते थे।

मालिक—अच्छा, तो वे अपने सम्बन्धमें और कुछ कहते थे? विवाहका हाल बतलाते थे?

योगी—विवाह! अरे राम-राम! उनका विवाह?

मालिक—विवाह क्यों नहीं?

योगी—वे अखण्ड योगी हैं। आप कहते हैं—विवाह!

मालिक—ऐसी-तैसी उनकी और तुम्हारी। 'तुम चुपके-से चले जाओ।' नहीं तो मारे जूतोंके सारी शृङ्खला बिगाड़ दूँगा।

योगी—आखिर मामला क्या है?

मालिक—तुम्हारे साथ जो है, वह मेरा दामाद है। बारह सालका था, उसे कोई बाबा बहका ले गया था। गाँवके मदरसेमें पढ़ता था। नाम था बालाजी। तुम्हारे साथीका क्या नाम है?

योगी—(मन-ही-मन मायाको प्रणामकर) ठीक है, नाम तो बालाजी ही बतलाता था।

बूढ़ेका एक दामाद था जरूर। नाम भी उसका बालाजी ही था। एक नामके सैकड़ों होते हैं। उसे कोई बाबा ले भी गया था।

मालिक—तुम अच्छे लड़के दिखलायी देते हो। फिर तुम्हारा अपराध भी कुछ नहीं; बल्कि तुमने यह अहसान किया कि उसे इधर ले आये। कल जो गाँवकी स्त्रियाँ मन्दिरपर गयीं तो सखियोंके साथ मेरी लड़की विमला भी चली गयी थी। लड़की जो लौटकर आयी तो बेतरह रोने लगी। जब उसकी माताने बहुत दम-दिलासा दिया तब उसकी हिचकी रुकी। उसने कहा कि मेरे पति ही योगीरूपमें मन्दिरपर एक संन्यासीके साथ ठहरे हैं। बारह साल हो गये तो क्या हुआ, कोई स्त्री अपने पतिको भूल थोड़े ही सकती है!

योगी—नहीं भूल सकती। भूलका क्या काम?

मालिक—बेटा रमेश!

रमेश—जी!

मालिक—इधर आओ। देखो बेटा रमेश! इन संन्यासीजीके चरण-स्पर्श करो। यही तुम्हारे जीजाजीको लाये।

रमेशने योगीको प्रणाम किया, योगीने मायाको प्रणाम किया।

मालिक—जीजाजी क्या करते हैं?

रमेश—सोते हैं।

मालिक—तुम देख आये हो!

रमेश—जी हाँ।

मालिक—गुदगुदे गद्देपर मसहरी काहेको देखी होगी! अच्छा जाओ, धीरेसे किवाड़ बंद करना और ताला लगा देना। और हाँ, विमलाको जरा यहाँ भेजते जाना।

रमेश गया। विमला आयी।

मालिक—बेटी विमला! तुम्हारी समझसे तुमने ठीक-ठीक पहचाना है न कि ऊपर जो योगी सो रहा है वही तुम्हारा पति है?

विमला चुपचाप रोने लगी।

मालिक—कहिये महात्मन्! वह रोती क्यों, यदि वही न होता!

योगी—वही है।

मालिक—आपकी आत्मा आईना हो गयी है। आप भी समझते हैं कि वही है।

योगी—वही है! वही है! मातेश्वरी माया वही है!

मालिक—नाम भी वही, रूप भी वही।

योगी—नाम भी वही, रूप भी वही। वही तो बेटा जुआ-चोर। कहता था कि मैं ईश्वर हूँ और माया कुछ नहीं। अब नथ गये बच्चे नथकी नकबेसरमें।

मालिक—आप ही बतायें कि मेरा क्या कर्तव्य है?

योगी—मैंने तो प्रार्थना ही की थी इस कर्तव्यके लिये।

मालिक—तो आप इसी समय यहाँसे चले जायँ। उससे हम निबट लेंगे। अपना और उसका खून एक कर दूँगा, नहीं तो मेरा

नाम विश्वनाथ महाराज नहीं। मेरी एकमात्र कन्याको कलङ्कित करता है बेईमान।

योगी—अच्छा चलता हूँ। जय सीताराम।

मालिक—जय श्रीराम। अब आप कहाँ जायँगे?

योगी—अपने आश्रमपर लौट जाऊँगा। दुनिया देख ली है।

× × × ×

बालाजीकी जो आँख खुली तो शाम हो गयी। किवाड़ खोले तो बाहर था ताला। इधर-उधर देखा तो कोई नहीं! आवाज दी, कुछ नहीं। योगीको देखा, कहीं पता नहीं। बालाजीको बड़ा क्रोध हुआ। क्या मैं नजरबंद कर दिया गया! ईश्वरको भी नजरबंद!

ताबड़तोड़ जो दस-पन्द्रह लातें किवाड़ोंपर जमायीं तो एक आला-बालाने आकर ताला खोल दिया और कहा—'कहिये स्वामीजी! क्या आज्ञा है?'

बाला—बाहरसे साँकल क्यों लगायी थी? ताला भी था, इसका पता नहीं था?

युवती—जिससे कोई लड़का या बिल्ली आपकी निद्रा भंग न करे।

बालाजीकी गरमी शान्त हो गयी। अपने ईश्वरत्वमें जो शङ्का पैदा हो गयी थी, वह दूर हो गयी।

बाला—दूसरा योगी कहाँ गया?

विमला—अपनी कुटीपर चले गये।

बाला—मेरे लिये क्या कह गये?

विमला—कह गये कि आप तबतक यहीं रहें जबतक मैं पुनः न लौट आऊँ!

बाला—कब आयेगा?

विमला—सात दिनके अंदर।

बाला—चला क्यों गया? बिना कहे चला गया!

विमला—कोई चीज लाने गये हैं।

बाला—मैं सात दिन एक जगह नहीं रह सकता।

विमला—क्यों?

बाला—बहता पानी, रमता जोगी, इनको कौन सके बिलमाय?

विमला—आप योगी थे तो मुझसे विवाह क्यों किये थे?

बाला—किसने विवाह किया?

विमला—आपने।

बाला—किसके साथ?

विमला—मेरे साथ।

बाला—तुम भूलती हो।

विमला—वही नाम, वही रूप।

बाला—फिर भी मैं वह नहीं।

विमला—वही! वही! निश्चित वही!!

बाला—कैसे जाना?

विमला—वही नाम, वही रूप और वही मसा।

बाला—मसा क्या चीज?

विमला—नाकके नीचे जो छोटा-सा मसा है, वह भी था।

बाला—फिर भी मैं वह नहीं।

विमला—वाणी वही, रंग वही।

बाला—फिर भी नहीं। तुम भ्रममें हो।

हाथमें भरे बंदूक लिये मालिक ऊपर आ गये।

मालिक—देखो बालाजी! तुम दोनोंकी सारी बातें मुझे जीनेमें

खड़े होकर सुननी पड़ीं। वैसे पिताको लड़की-दामादकी बात नहीं सुननी चाहिये; परंतु लाचारी थी। यदि अब तुम अपना जोगपन छाँटोगे तो अच्छा न होगा।

बाला—क्या होगा?

मालिक—इस बंदूकमें पाँच गोलियाँ हैं। दोसे तुम दोनोंको मारूँगा, दोसे हम दोनों मरेंगे, एक फिर भी बच रहेगी। मेरे दोनों लड़के घरमें राज करेंगे। क्या समझे?

बालाजीने देखा कि मामला बेढब है। दब गये! अवसर पाकर किसी दिन निकल भागेंगे—यह मनमें स्थिर किया।

मालिक—क्या कहते हो?

बाला—आपकी आज्ञा स्वीकार है।

मालिक—यह मत समझना कि भाग जाओगे। तुम्हारे ऊपर छः सालतक कड़ा पहरा रहेगा।

दोनों पति-पत्नीकी तरह रहने लगे। तीन साल डटे रहे। जब एक लड़का पैदा हो गया, पहरा कुछ ढीला पड़ गया। एक रात निकल भागे। आखिर योगी थे, योगी नहीं चाहता राज्य भी। तब आकर उन्होंने अपना यह लङ्काकाण्ड सुनाया।

मैंने पूछा—बालाजी! अब मायाके प्रति क्या विचार है?

बालाने कहा—'वह जगदम्बा है। माताकी इज्जत और परवा करना अपना धर्म है। वहाँ रहकर ईश्वर नहीं बना जा सकता। रामायणमें ठीक ही लिखा है।'



बालक बीरबलकी बुद्धिमानी

जिस समय बालक बीरबलकी आयु पंद्रह सालकी हुई, माता और पिता—दोनों न मालूम किस 'अगोचर परदेश' को चले गये। उस समय 'गरीब बीरबल' के पास केवल पचास रुपये थे। पढ़े-लिखे भी वे बहुत कम थे।

खूब सोच-समझकर बीरबलने पानकी दूकान खोली और वह भी किलेके पास। उस समय बादशाह अकबर आगरेके किलेमें निवास कर रहे थे। गोस्वामी तुलसीदासजीको कैद करनेके कारण वीर बजरंगीने बादशाहको दिल्लीके किलेसे सदाके लिये निकल जानेकी आज्ञा दे दी थी। अतः अकबर, जहाँगीर और शाहजहाँने आगरेमें ही रहकर राज्य किया था। औरंगजेब जरूर दिल्लीके किलेमें जाकर रहा था। सो हमेशाके लिये 'इस्लामी राज्य' खतम भी हो गया।

बालक बीरबल अपनी पानकी दूकानपर बैठा सुपारी काट रहा था और सरस्वती देवीका मन्त्र 'ॐ ऐं ॐ' का जाप कर रहा था। आजकलके विद्यार्थी लोगोंको सरस्वती माताका मन्त्र ही नहीं मालूम। जो विद्याका 'बीजमन्त्र' नहीं जानता और विद्या प्राप्त करना चाहता है, उसे 'विद्याका प्रेत' कहा जाता है।

बीरबलने देखा कि किलेसे निकलकर एक मियाँ लपकता हुआ आ रहा है। वह मियाँ आकर दूकानके सामने खड़ा हो

गया और बोला—'पिंडीजी! आपके पास चूना है?'

'कितना चाहिये।' बीरबलने पूछा।

'पावभर भीगा हुआ तर चूना चाहिये।'

'इतने चूनेका क्या करोगे?'

'आपके पास तर चूना कितना होगा?'

मेरी एक गगरीमें तीन सेर चूना भीग रहा है। जितना चाहो ले जाओ, पर यह तो बताओ कि पावभर चूनेकी क्यों जरूरत पड़ी?'

क्या बतलाऊँ माराज! बादशाह सलामत गुशल फरमाकर जो निकले तो मैंने पान पेश किया। उसे खाते-खाते वे एक कुर्सीपर बैठ गये और हुक्म दिया कि 'पावभर चूना ले आओ।'

'मगर अपने लिये एक कफन भी साथ लेते जाना!'

'अरे पिंडीजी! यह आप क्या फरमाते हैं?'

'तुम बादशाहके लिये पान लगानेपर नौकर हो?'

'जी माराजी!'

'कितने दिनोंसे?'

'कोई पंद्रह साल हो गये।'

'फिर भी पान लगाना नहीं आया?'

'आप तो उलझन-में-उलझन पैदा कर रहे हैं जनाब!'

अब तुम्हारी सारी उलझनें दूर होनेवाली हैं।

'आपका मतलब?'

'यह है कि यह पावभर चूना तुम्हें खिलाया जायगा।'

'तब तो मैं मर जाऊँगा।'

'इसीके लिये मैंने कफन ले जानेकी सलाह दी थी।'

'आखिर मेरा कसूर!'

'पानमें चूना ज्यादा लगा दिया। बादशाहकी जीभ कट गयी है। चूनेकी तीव्रतासे तुमको परिचित करानेकी आवश्यकता समझी गयी।'

'यानी!'

'यानी यह पावभर चूना तुम्हें खिलाया जायगा।'

सच कहते हो, पिंडीजी! तुम 'जोतसी' हो, सारा हाल आइना हो गया। अल्लाह तुम्हें बरकत दे। अब मेरे बचनेका भी तो कोई उपाय बताओ जोतसीजी माराज!'

'एक सेर घी लो, फिर चूना ले जाओ। जब बादशाह कहे—'चूना खाओ, तो बेधड़क खा लेना। चूनाका शत्रु घी है। घीके प्रभावसे न तो तुम्हारी जबान (जीभ) फटेगी और न कलेजा कटेगा। मरोगे भी नहीं। चूनेका जहर घी मारेगा और घीका जहर चूना मारेगा। दोनों लड़कर मर जायँगे।'

'खुदा तुम्हारा दर्जा ऊँचा करे। तुम्हारी दूकानमें घी भी है?' हाँ, अपने खानेके लिये कल दो सेर घी लिया था। एक सेर तुम ले लो।

बीरबलने तौलकर पावभर चूना और सेरभर घी सामने रख दिया। दोनों चीजोंके दाम देकर मियाँने घी पी लिया और चूना लेकर महलकी तरफ भागा।

बादशाहने पूछा—'चूना लाया?'

'जी हाँ, गरीबपरवर!'—खोजा बोला।

'यहीं बैठकर खा जाओ।' बादशाहने हुक्म दे दिया। खोजा सामने बैठ गया। बादशाहको पावभर चूना दिखलाकर सब खा गया।

× × × ×

शामको जब वही खोजा बादशाहको पान देने गया, तब

बादशाहने पूछा—'क्यों मुनीर! तू मरा नहीं?'

'हुजूरके इकबालसे बच गया!'

'कैसे बचा?'

खोजा मुनीरने बीरबलका सारा किस्सा बयान कर दिया।

बादशाहने कहा—'कल दरबारमें उस लड़केको हाजिर करो।'

सबेरा हुआ। दरबार लगा। खोजा गया और बीरबलको ले आया। बीरबलने सलाम किया। बादशाह हँसा। फिर बोला—'क्यों मियाँ लड़के! इस मरदूद खोजेको घी पीनेकी सलाह तुमने दी थी?'

'जी जहाँपनाह!'

'क्यों?'

'मैं समझ गया था कि इसने आपके पानमें चूना ज्यादा लगा दिया।'

'तुम बहुत अक्लमंद मालूम पड़ते हो!'

'सरस्वतीकी कृपा है गरीबपरवर!'

'तुम मेरे एक इम्तहानमें पास हुए हो। दो सवालोंका जवाब तुमसे और लिया जायगा। अगर तीनों बातें ठीक निकलीं तो तुमको कुछ इनाम दिया जायगा।'

'फरमाइये जहाँपनाह!'

बादशाहने अपने आठों मन्त्री बुलाये। सबको एक कतारमें खड़ा किया। सबके अन्तमें बालक बीरबलको खड़ा किया। फिर बादशाहने सब वजीरोंसे सवाल किया—

'१२मेंसे १ गया, क्या रहा?'

आठों वजीरोंने क्रमशः उत्तर दिया, '११ बाकी रहे हुजूर!'

मगर बीरबलकी ओर इशारा किया गया, तब उसने कहा—'कुछ भी बाकी नहीं रहा जहाँपनाह!'

'वह कैसे?' बादशाहने पूछा।

बीरबलने उत्तर दिया—'बारह महीनोंमेंसे यदि सावनका एक महीना निकाल दिया जाय तो पैदावारकी सफाई हो जायगी। अतः कुछ भी न रहा। बादशाहके प्रत्येक सवालमें एक 'रहस्य' होना चाहिये। वजीरोंसे मामूली सवाल नहीं पूछा जाता।'

बादशाह बहुत खुश हुए, आठों वजीर बहुत लजाये। हँसकर बादशाहने कहा—'नम्बरवार सब वजीरोंको जवाब देना चाहिये—'एक और एक कितना हुआ?'

आठों मन्त्रियोंने उत्तर दिया—'दो हुए सरकार!'

परंतु बीरबलने उत्तर दिया—'एक और एक ग्यारह हुए गरीबपरवर!'

'वह कैसे?'—बादशाहने कहा।

बीरबलने कहा—'अगर आप-सा बादशाह हो और मुझ-सा वजीर हो तो हम दोनोंकी शक्ति दोके समान न होकर ग्यारहके समान हो जायगी!'

बादशाहने कहा—'मैं अपनी बादशाहीमें नौ वजीर बनाना चाहता था। पूरा नवग्रह चाहता था। आठ मिल गये थे। नवें तुम आज मिल गये हो। मियाँ लड़के! तुम्हारा नाम क्या है?

'मुझे बीरबल कहते हैं जहाँपनाह!'

'महाराज बीरबल! आजसे आप 'वजीरे आजम' हुए और आपको 'महाराज' का खिताब दिया गया।'

'गरीबपरवरने मेरी जो कदर की है, उसके लिये शुक्रिया'—बीरबलने कहा।

बादशाहकी आज्ञासे बीरबलको प्रधान मन्त्रीवाली पोशाक दी गयी और शाही सिंहासनकी दाहिनी ओर एक छोटे सिंहासनपर बैठनेकी जगह दी गयी। शेष आठों मन्त्री उनके नीचे चौकियोंपर बिठाये गये।

यह बात सबको मालूम है कि अकबर और बीरबलका साथ बहुत दिनोंतक रहा था।

छत्तीस सालतक दोनोंमें मित्रता रही और साथ रहा था। जब काबुलकी लड़ाईमें महाराज बीरबल मारे गये थे, तब बादशाह अकबर उनके मरनेकी खबर सुनकर बेहोश होकर खड़े-से जमीनपर गिर पड़े थे।

बादशाहने तीन दिन अन्न ग्रहण नहीं किया था और रात-दिन रोते रहते थे।

बादशाहने कहा था—'कैसा अच्छा होता, जो मैं भी महाराज बीरबलके साथ मर जाता। जिंदगी तो बीरबलके साथ गयी, अब तो मौतके दिन पूरे कर रहा हूँ।'

सरस्वती देवीको सिद्ध करके बीरबलने अपना नाम अमर कर दिया। आजकलके विद्यार्थी कहते हैं—'सरस्वती कौन चीज? उसके मंतर-जंतरपर हमें विश्वास नहीं।'



अहिंसाकी विजय

एक बार काशीनरेश नारायणसिंहने अयोध्याके राजा चन्द्रसेनपर अकारण चढ़ाई कर दी। अपने राज्यका विस्तार करना ही कारण था। राजा चन्द्रसेन था अहिंसाका पुजारी। उसने सोचा कि युद्ध करनेसे हजारों आदमी मारे जायँगे। इसलिये वह राज्य तथा राजधानी छोड़कर रातमें चला गया। उसने संन्यासीका रूप बनाया और काशी जाकर वह एक कुम्हारके मन्दिरमें रहने लगा। राजाके साथ उसकी एक रानी भी थी। रानी पतिव्रता थी। संकटके समय अपने पतिको अकेला छोड़ वह अपने मायके नहीं गयी। साध्वी-वेशसे राजाके ही साथ रहने लगी। रानी गर्भवती थी। नौ महीने बाद एक पुत्र पैदा हुआ। राजाने उसका नाम रखा—सूर्यसेन।

जब सूर्यसेन दस वर्षका हुआ तब उसे शिक्षा प्राप्त करनेके लिये हरिद्वारके गुरुकुलमें भेज दिया गया।

एक दिन काशीनरेशको पता लगा कि अयोध्यानरेश चन्द्रसेन अपनी रानीके साथ साधुवेशमें उसीकी काशीमें रहता है। राजा बहुत कुपित हुआ। उसने दोनोंको गिरफ्तार करवा लिया और दोनोंको फाँसीकी सजा दे दी। यह समाचार पाकर उसका पुत्र सूर्यसेन हरिद्वारसे आया और माता-पिताके अन्तिम दर्शन करने जेलखानेमें गया। पुत्रको प्यार करके पिताने उपदेश दिया—

१-न अधिक देखना, न थोड़ा देखना।

२-हिंसा कभी प्रतिहिंसाके द्वारा पराजित नहीं होती।

३-लड़ाईको लड़ाईके द्वारा जीता नहीं जा सकता।

४-जवाबी शत्रुतासे शत्रुता नहीं मिट सकती।

५-हिंसा, लड़ाई और शत्रुताको प्रेम ही जीत सकता है।

जब अयोध्यानरेशको रानीके साथ फाँसी दे दी गयी तब राजकुमार सूर्यसेनने कुछ सोच-समझकर काशीनरेशके महावतके यहाँ नौकरी कर ली। काशीनरेशको मालूम न था कि अयोध्यानरेशका कोई पुत्र भी था।

सूर्यसेनको मुरली बजानेका शौक था। प्रातः चार बजे वह प्रतिदिन बड़े प्रेमसे मुरली बजाया करता था। एक दिन उसकी मुरलीकी मधुर ध्वनि काशीनरेशके कानोंमें भी जा पहुँची।

प्रातः राजाने महावतसे पूछा—'तुम्हारे घरमें मुरली कौन बजाता है?' महावतने कहा—'एक आवारा लड़केको मैंने नौकर रखा है। हाथियोंको पानी पिला लाता है। वही मुरली बजाया करता है।'

काशीनरेशने सूर्यसेनको अपना 'शरीररक्षक' बना लिया। एक दिन काशीनरेश शिकार खेलने गया। घने जंगलमें वह अपने साथियोंसे छूट गया। एक घोड़ेपर राजा था, दूसरेपर था उसका शरीररक्षक—सूर्यसेन! थककर दोनों एक घने वृक्षकी छायामें जा बैठे। राजाको कुछ आलस्य मालूम हुआ। गरमीके दिन थे ही। सूर्यसेनकी गोदको तकिया बनाकर राजा सो गया।

उसी समय सूर्यसेनको ध्यान आया कि यह वही काशीनरेश है जिसने उसके माता-पिताको बिना अपराध फाँसीपर लटकाया था। आज मौका मिला है। क्यों न माता-पिताके खूनका बदला इससे चुका लूँ। उसकी आँखोंमें खून उतर आया। प्रतिशोधकी ज्वाला छातीमें भभक उठी। उसने म्यानसे तलवार खींच ली!

उसी समय पिताका एक उपदेश उसके दिमागमें आ गया—हिंसा कभी प्रतिहिंसाके द्वारा पराजित नहीं होती।

सूर्यसेनने चुपके-से अपनी तलवार म्यानमें रख ली। पिताकी वसीयत मेटनेका हौसला न रहा।

उसी समय राजाकी आँखें खुल गयीं। बैठकर काशीनरेशने कहा—'बेटा! बड़ा बुरा सपना देखा है मैंने। ऐसा मालूम हुआ कि तुम मेरा सिर काटनेके लिये अपनी नंगी तलवार हाथमें लिये हो!

सूर्यसेनने फिर तलवार खींच ली, बोला—'आपका सपना गलत नहीं है। मैं अयोध्यानरेशका राजकुमार हूँ। आपने बिना अपराध मेरे साधु-स्वरूप माता-पिताका वध कराया है; मैं आज उसका बदला लूँगा। जबतक आप अपनी तलवार म्यानसे निकालेंगे तबतक तो मैं आपका सिर धड़से जुदा कर दूँगा। आपके अत्याचारका बदला लेना ही चाहिये।'

दूसरा उपाय न देख राजाने हाथ जोड़े और कहा—'बेटा! मुझे क्षमा कर दो। मैं तुमसे अपने प्राणोंकी भिक्षा माँगता हूँ।' मैं आज तुम्हारी शरण हूँ।

'अगर मैं आपको छोड़ता हूँ तो आप मुझे मरवा डालेंगे।'

'नहीं बेटा! विश्वनाथ बाबाकी शपथ। मैं तुमको कोई भी सजा न दूँगा।'

इसके बाद दोनोंने हाथ-में-हाथ पकड़कर अपनी प्रतिज्ञा निभानेकी शपथ खायी।

तब सूर्यसेनने अपना सारा भेद खोल दिया। अन्तमें कहा—'मरते समय मेरे पिताने मुझे जो उपदेश दिया था, उसीके कारण आज आपकी जान बची है।'

'वह क्या उपदेश है?—राजाने प्रश्न किया।

'अधिक न देखना, न थोड़ा देखना। हिंसाको कभी प्रतिहिंसाके द्वारा पराजित नहीं किया जा सकता'—सूर्यसेनने कहा। 'इसका

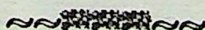
अर्थ क्या है?'—राजाने पूछा।

सूर्यसेनने समझाया—'अधिक न देखना' का अर्थ यह है कि हिंसाको अधिक दिनोंतक अपने मनमें नहीं रखना चाहिये। 'न थोड़ा देखना' का मतलब यह है कि अपने बन्धु या मित्रका जरा भी दोष देखकर उससे सहज ही सम्बन्ध मत तोड़ना। अब रहा—'हिंसाको प्रतिहिंसाके द्वारा पराजित नहीं किया जा सकता।' इसका अर्थ प्रत्यक्ष है। यदि मैं आपको प्रतिहिंसाकी भावनासे मार डालता तो परिणाम यही होता न कि आपके पक्षवाले मुझे मार डालते। आज मेरे पिताके उपदेशने हम दोनोंके प्राण बचाये हैं। 'जवाबी शत्रुतासे शत्रुता नहीं मिट सकती है'—यह सिद्धान्त कितना सच्चा है। आपने मेरे जीवनकी रक्षा करके महत्त्वपूर्ण काम किया है। मैंने भी आपके जीवनकी रक्षा करके कम महत्त्वपूर्ण कार्य नहीं किया है।

'बेटा! तूने तो मेरा पाप नाश कर दिया है। पुण्यका सूर्य प्रकाशित हो उठा है!'

गद्‌गदकण्ठ होकर राजाने लड़केको छातीसे लगा लिया। राजधानीमें लौटकर काशीनरेशने सूर्यसेनका राजपाट उसे लौटा दिया। अयोध्यानरेश सूर्यसेनको काशीनरेशने अपनी राजकुमारी व्याह दी।

अहिंसाकी तलवारने जो काम किया, वह हिंसाकी तलवार नहीं कर सकती थी। हिंसासे दोनों राजवंश डूब जाते। किसीकी आत्माको किसी भी प्रकारसे दुःख पहुँचाना ही हिंसा है।



गोभक्त रामसिंह

(१)

सबलगढ़ तहसीलके फाटकपर रहीम सिपाही बैठा था। तबतक भीतरसे रामसिंह सिपाही एक रोटी और उसीपर कुछ खीर रखे बाहर निकला।

रहीम—कहो रामसिंह! यह रोटी और खीर कहाँ लिये जा रहे हो?

रामसिंह—यह 'अग्रासन' है।

रहीम—इसके क्या मानी?

रामसिंह—हमलोग जब रोटी बनाते हैं, तब पहली रोटी गोमाताके लिये ही बनाते हैं। उसको 'अग्रासन' कहा जाता है।

रहीम—तुम रोटी खा चुके?

रामसिंह—पहले गो-माताको खिला लूँगा, तब कहीं मैं चौकेमें पैर रखूँगा।

रहीम—तुम गायको माता मानते हो?

रामसिंह—माता! माता ही नहीं, जगन्माता! तुम्हारे मुसलमान धर्ममें भी कहा है कि यह पृथ्वी गायके सींगपर रखी है।

रहीम—तुम्हारा इष्टदेव कौन है? तुम किसकी पूजा करते हो?

रामसिंह—मेरी इष्टदेवी गाय है। मैं गायकी ही पूजा करता हूँ। बैतरनीकी नाव वही है।

रहीम—आज तुम्हारी गोभक्ति देखी जायगी!

रामसिंह—कैसे?

रहीम—तुम जानते हो कि आज ईद है।

रामसिंह—जानता हूँ, फिर?

रहीम—यह जानते हो कि इस समय तहसीलदार, नायब तहसीलदार, थानेदार, दीवान और कई सिपाही मुसलमान हैं।

रामसिंह—यह भी जानता हूँ। फिर?

रहीम—इस तहसीलके अहातेमें ही थाना भी है, यह मालूम है?

रामसिंह—मालूम है। फिर?

रहीम—तहसील और थानेके बीचमें जो आँगन है, उसीमें गोकुशी की जायगी।

रामसिंह—किस समय?

रहीम—रातके बारह बजे।

रामसिंह—ग्यारह बजेसे मेरा पहरा है।

रहीम—तब तो तुम अपनी आँखोंसे, अपनी गोमाताको जबह होते देखोगे।

रामसिंह—यह बात सब अहलकारोंने पास कर दी है कि तहसीलमें गोकुशी हो?

रहीम—जी हाँ। ठाकुर साहब! सब अफसर मुसलमान हैं। यह बात तय हो चुकी है।

रामसिंह—मेरे सामने गोकुशी हो, यह बात असम्भव है। नामुमकिन है रहीम!

रहीम—मैं खुद अपने हाथसे गायके गलेपर छुरी चलाऊँगा।

रामसिंह—मगर सिरपर कफन बाँधकर आना।

रहीम—देखूँगा कि तुम क्या करते हो?

(२)

रातके ग्यारह बजे रामसिंह सिपाही वरदी पहनकर और हाथमें भरी हुई दुनाली लेकर खजानेका पहरा देने लगा। वहाँपर बारह बंदूकें और भी रखी थीं। पाँच गारदके सिपाहियोंकी और सात थानेके सिपाहियोंकी। सभी भरी हुई थीं और दुनाली थीं।

आधा घंटेके बाद एक जवान और सुन्दर गायको लेकर रहीम

आया। उसने आँगनके एक खूँटेपर गाय बाँध दी और छुरीकी धार देखने लगा।

आँगनभरमें कुर्सियाँ बिछायी गयीं। तहसीलदार, नायब तहसीलदार, थानेदार और दीवानजी आकर उन कुर्सियोंपर बैठ गये। शहरके कुछ धनी, मानी, रईस मुसलमान भी आकर बैठ गये। सब लोग चौदहकी संख्यामें थे। सात मुसलमान सिपाही पीछे खड़े थे। एक मौलवीने उठकर जबहकी दुआ पढ़ी। छुरी लेकर रहीम आगे बढ़ा।

(३)

रामसिंह—खबरदार रहीम! खबरदार!

रहीम—क्या बकते हो?

रामसिंह—चनेके धोखे मिर्च मत चबाना।

रहीम—चुप रहो।

रामसिंह—तहसीलदार साहब! यह तहसील केवल मुसलमानोंकी तहसील नहीं है। इस तहसीलमें हिंदूलोगोंका भी साझा है।

तहसीलदार—इसका मतलब?

रामसिंह—मतलब यह कि तहसीलके भीतर गोकुशी नहीं हो सकती।

तहसीलदार—मेरा हुक्म है।

रामसिंह—आपका हुक्म कोई चीज नहीं। कलक्टरका हुक्म दिखलाइये।

तहसीलदार—अपनी तहसीलका मैं ही कलक्टर हूँ। तहसील सबलगढ़का मैं जार्ज पञ्चम हूँ। समझे?

रामसिंह—चाहे आप साक्षात् खुदा ही क्यों न हों, पर मेरे सामने ऐसा हरगिज नहीं होगा।

थानेदार—होगा, होगा और बीच खेत होगा। हथियार रख दो और निकल जाओ तहसीलके बाहर।

रामसिंह—मेरा हथियार कौन छीन सकता है?

थानेदार—मैं!

रामसिंह—आइये! छीनिये आकर!

दीवान—क्या तुम्हारी आफत आ गयी है रामसिंह! अपने अफसरसे ऐसी नाजायज गुफ्तगू!

रामसिंह—अफसर! किस बेवकूफने इनको अफसर बनाया? पब्लिकका दिल दुखाना अफसरका काम नहीं है।

थानेदार—रहीम! अपना काम करो! काफिरको बकने दो। रहीमने गायके पास जाकर ज्यों ही छुरा ऊँचा किया, त्यों ही रामसिंहने दनसे गोली चला दी, रहीम मरकर गिर पड़ा।

थानेदार—पकड़ो, पकड़ो!

रामसिंहने दूसरी गोली थानेदारकी छातीपर रसीद की। 'हाय' कहकर थानेदार भी वहीं ढेर हो गये।

तहसीलदार उठकर भागने लगे। रामसिंहने खाली बंदूक वहीं डाल दी और लपककर दूसरी भरी दुनाली उठा ली।

रामसिंह—कहाँ चलें जार्ज पञ्चम! जरा अपनी कलक्टरीकी चाशनी तो चख लो।

इतना कहकर रामसिंहने घोड़ा दबाया। तहसीलदारकी खोपड़ीमें गोली लगी और वे वहीं ढेर हो गये।

उसके बाद भगदड़ शुरू हुई। मगर रामसिंहको विराम कहाँ, तड़ातड़ गोली चल रही थी, निशाना अचूक था। ग्यारह आदमी जानसे मारे गये।

इसके बाद रामसिंहने गोमाताके चरण छुए और रस्सी खोल दी, वह बाहर भाग गयी। तब रामसिंहने एक गोली अपनी छातीमें मार ली और मरकर वहीं गिर पड़े।

सबेरा हुआ। सारा समाचार शहरमें फैल गया। हिंदू पब्लिकने रामसिंहकी अरथी बनायी। एक सेठजीने लाशपर पाँच सौ

रुपयेका दुशाला डाल दिया। चार साधुओंने लाशमें कंधा लगाया। शहरके हलवाइयोंने बतासे जमा किये। सराफोंने पैसे जमा किये। धनिकोंने पैसे और रेजगारी इकट्ठी की। माली लोगोंने फूल इकट्ठे किये। जब लाश चली तो आगे-आगे वही कुर्बानीवाली गाय सजाकर चलायी गयी; पीछे शङ्ख, घंटा और घड़ियालका नाद होने लगा। रास्तेमें फूल-बतासे, पैसा और रेजगारी बरसायी जाने लगी। विराट् जुलूस निकाला गया। कई एक सहृदय मुसलमान और ईसाई सज्जन भी साथ थे।

श्मशानपर जब लाश उतारी गयी, तब जनाब मुहम्मदअली सौदागरने लाशपर गुलाबके फूल चढ़ाकर कहा—'हजरत मुहम्मद साहबने शरीफमें लिखा है कि उन जानवरोंको हरगिज न मारा जाय जो पब्लिकको आराम पहुँचाते हैं।' बादशाह अकबर और बादशाह जहाँगीरने कानून बनाकर गोकुशी बंद कर दी थी। अफसोस है कि हमारे तअस्सुबी मुसलमान, सिर्फ हिंदू भाइयोंका दिल दुखानेकी गरजसे गोकुशी करते हैं। मैं उनपर लानत भेजता हूँ।

पादरी यंग साहब ईसाई थे। उन्होंने कहा—'सरकार अगर गोकुशी कराती होती तो विलायतमें खूब गोकुशी की जाती। मगर वहाँ इसका नामोनिशानतक नहीं है। विलायतके सभी अंग्रेज किसान गायोंको पालते हैं। अफसोस है कि सिर्फ चमड़ेके व्यापारने गोकुशीका बुरा काम जारी कर रखा है। भाई रामसिंहकी बहादुरीकी मैं तारीफ़ करता हूँ। आप साहबानसे प्रार्थना करता हूँ कि ठाकुर रामसिंहके बाल-बच्चोंके वास्ते कुछ चंदा किया जाय। ' उसी समय पंद्रह हजारका चंदा लिखा गया। उसमें सहृदय जनाब मुहम्मदअली साहबने हजार और पादरी साहबने एक हजार रुपये दिये।

यह घटना अक्षरशः सत्य है। केवल नाम बदल दिये गये हैं।



मानवता और जातीयता

(१)

कई साल पूर्वकी घटना है। मथुरामें होम साहब कलक्टर थे। उनकी मेम मर चुकी थी। केवल पाँच सालका एक लड़का था—जेम्स। जब साहबका अन्तकाल आया, तब उन्होंने अपने परम मित्र पं० कमलकिशोर शास्त्रीको बुलाया और अपने लड़केका हाथ उनको पकड़ाकर कहा—'डियर शास्त्री! अब मैं रामके दरबारमें जा रहा हूँ। मेरे पास केवल ३॥ लाख रुपये हैं, सो यह लो। इस लड़केको अपना ही लड़का मानकर खूब पढ़ाना। आई० सी० एस्० की परीक्षा जरूर पास करा देना। यही मेरी वसीयत है और यही आपसे अनुरोध है।'

(२)

शास्त्रीजीका मकान देहातमें था। आपको जमींदारीसे तीस हजार सालानाका मुनाफा था। आपने जेम्सको अपना ही लड़का माना। दैवयोगसे शास्त्रीजीका घर संतानहीन था। आपने जेम्सका हिंदू नाम रखा—ललितकिशोर पण्डित! ललितको तीन मास्टर घरपर पढ़ाने लगे। संस्कृत, हिंदी, उर्दू तथा अँग्रेजीकी शिक्षा चालू हो गयी। जेम्स कभी कुर्ता-धोती पहनता तो कभी कमीज-पेंट धारण करता। वह साफ हिंदी बोलने लगा और हिंदू लड़कोंके साथ आँखमिचौनी खेलने लगा। वह ललित कहनेपर भी बोलता और जेम्स पुकारनेपर भी। उसके दो नाम पड़ गये। वह

पण्डितजीको 'पिताजी' और पण्डितानीजीको 'अम्मा' कहता था। जब ललितने इन्ट्रेंस पास किया तब पण्डितजीका अन्त समय निकट आ गया। उन्होंने अपनी स्त्रीसे कहा—'लो भाई! मैं तो चला! जयरामजीकी। रोना-धोना मत। ललितको आई० सी० एस्० जरूर पास करा देना। उसे विलायत भेज देना। वहाँ वह बी० ए० करके आई० सी० एस्० पढ़ेगा। मेरे मित्र होम साहबकी इच्छा जरूर पूरी करना। फिर चाहे सारी जमींदारी क्यों न बिक जाय! उसे अपना ही पुत्र समझते रहना और जेम्सके नाम जो ३॥ लाख रुपये बैंकमें जमा हैं, उन्हें मत छूना।'

(३)

जेम्स विलायत गया। वहाँ वह पाँच सालतक पढ़ता रहा। पहले ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालयसे बी० ए० पास किया, फिर आई० सी० एस्० की परीक्षा पास की। उसकी धर्ममाता हजारों रुपये खर्च बराबर भेजती रही। वह उसे पुत्र मानती रही। पुत्रने ५०० रु० मँगाये तो माताने ७०० रु० भेज दिये। मेरा लड़का परदेशमें तकलीफ न उठाये। इधर गुमास्ता लोगोंने मुनाफेके रुपयोंको अपना ही मुनाफा समझा। कुछ दिया, कुछका खर्च बता दिया। बाकीका बाकीमें डाल दिया—छुट्टी हुई। गाँवमें तीन जमींदार और भी थे—मिश्रजी, दूबेजी और लालाजी। उन्होंने पाँच सालमें सारी जमींदारी कर्ज दे-देकर रेहन करा ली। बदमाशोंने दो तीन बार चोरीका बहाना कर शास्त्रीजीके मकानका सारा सामान अपने-अपने घरोंमें मँगवा लिया। बचा केवल मकान और बुढ़िया! उसी समय मि० जेम्स साहब कलक्टर होकर मथुरा आये। आठ दिन मथुरा रहकर दौरेका हुक्म कर दिया। सबसे पहले आप हरीपुर जा पहुँचे, जहाँ वे ललित बनकर शिशुकालकी

ललित क्रीडाएँ कर चुके थे। गाँवके बाहर एक बागमें पड़ाव डाला गया। सुबहके समय, धोती-कुरता पहन, छड़ी हाथमें लेकर आप अपनी 'अम्मा'के दर्शन करने चले। मकानके भीतर जाकर पुकारा—'अम्मा!'

'ललित! तू आ गया?'—कहती हुई वृद्धा बाहर आयी। माताने लड़केको हृदयसे लगा लिया, प्रेमाश्रुकी वर्षा होने लगी। माता और पुत्र दोनों रो रहे थे। पाँच साल बाद मिलना हुआ था।

(४)

माता—बेटा! तूने आई० सी० एस्० की परीक्षा पास कर ली?

जेम्स—हाँ माताजी! आपकी कृपासे।

माता—आज मैं तुमसे 'उरिन' हो गयी! तेरे पिताजी मरते समय कह गये थे कि ललितको विलायत पास करा देना, फिर चाहे जायदाद रहे या न रहे।

माता बैठ गयी और जेम्स उसकी गोदमें सिर रखकर जमीनपर लेट गया। माता उसके सिरपर हाथ फेरती हुई बोली—'तूने तो पत्रमें लिखा था कि मैंने यहाँ अपना विवाह भी कर लिया है। सो बहू कहाँ है?'

ललित—बहू है बँगलेपर। उसने आपको बुलाया है। अब आजसे आपका निवास मथुरामें ही मेरे पास रहेगा। यमुनाजीका रोजाना स्नान कीजिये और द्वारकाधीशके दर्शन कीजिये।

माता—अच्छा बेटा! बहू यह तो नहीं कहेगी कि मेरा पति अँग्रेज है, फिर उसकी माता हिंदू कैसे हुई?

ललित—नहीं अम्मा! मैंने सब हाल समझा दिया है। वह आपकी खूब सेवा करेगी।

माता—तुझे तो भूख लगी होगी?

ललित—हाँ अम्मा! बड़ी भूख लगी है। आपके हाथकी रोटी पाँच सालसे नहीं खायी। जब मैं खाना खाने बैठता था, तब आपकी याद आती थी।

माता—तुझे कढ़ी और भात बहुत पसंद था, वही बनाऊँ?

ललित—हाँ, हाँ, हाँ! वही कढ़ी और भात!

वृद्धाने एक हाँडी उठायी और मट्ठा लानेके लिये वह पड़ोसीके घर चली गयी। इधर मौका पाकर साहब उठा और उसने सारा मकान देख डाला। कहीं कुछ नहीं रहा। सब सामान यार लोग खिसका ले गये थे। तलवारें, कुर्सियाँ, कपड़े, पलंग कुछ भी न छोड़ा। बदमाशोंने चौका लगा दिया था। साहबको बड़ा सदमा पहुँचा।

(५)

'पाँच साल बाद आज तृप्ति हुई, कहकर जेम्सने भोजन समाप्त किया। फिर बातचीत हुई—

जेम्स—माताजी! जमींदारी तो कायम है?

माता—नहीं बेटा! कर्जमें सब चली गयी।

जेम्स—कर्ज क्यों लिया गया?

माता—न लेती तो तुझे क्या भेजती?

जेम्स—और मुनाफा?

माता—कारिंदोंने कहा कि अकाल पड़ गया है! आमदनी वसूल नहीं होती।

जेम्स—आई सी! अच्छा, घरका सामान कहाँ गया?

माता—तीन बार चोरी हुई थी बेटा!

जेम्स—मेरी वजहसे आप सब तरह बरबाद हो गयी हैं। मेरे कारण आप राजासे फकीर हो गयीं। धिक्कार है मुझे!

माता—नहीं बेटा! मैंने अपने पतिकी इच्छा, तेरे पिताकी इच्छा और तेरी इच्छाको पूरा किया है। मैं आज तुझे देखकर बहुत सुखी हूँ। जायदादका क्या होता? सारी रियासत बेचकर मैंने तुझको खरीदा है। तू ही मेरी जायदाद है। मुझे अब क्या चाहिये, दो मुट्ठी चावल! सो तू देगा ही। अगर न देगा तो चाहे जिस सदाव्रतसे माँग लाया करूँगी।

जेम्स—राम, राम, यह क्या कहती हो अम्मा!

(६)

पण्डितानीजीको साथ लेकर जेम्स मथुरा चला गया। बँगलेमें एक खास कमरा सजाकर माताजीके लिये रिजर्व कर दिया गया।

एक नौकरानी और एक नौकर सेवाके लिये कायम किये गये। माताजीकी रसोईमें जेम्स भी शामिल था। मेम साहबका खाना खानसामा बनाता था। मेम साहबने माताजीको बड़ी ही सुशीलतासे माना। सब लोग आनन्दसे रहने लगे।

इसके बाद कलक्टर साहबने दफा ४२० के वारंट जारी किये। हरीपुरके तीनों जमींदार और पाँचों बदमाश तथा सब कारिंदे गिरफ्तार कर लिये गये। एक महीनेतक सबको चुपचाप हिरासतमें रखा; ताकि कलक्टरकी साध्वी माताको ठगनेका मजा मिल जाय। एक दिन जमींदारोंने साहबके पास संदेश भेजा—'अगर हुजूर चाहें तो हमलोगोंका असली रुपया दे दें, ब्याज न दें और सब जमींदारी वापस ले लें। अगर असल रुपया भी न देना चाहें और जमींदारी लेना चाहें तो वह भी मंजूर है। मगर इस 'बेमियादी बुखार' से छुटकारा दीजिये।'

उन बदमाशोंने अर्ज किया—'आपके मकानका सामान केवल इसलिये उठा लिया गया था कि वह नष्ट न हो जाय और

जब सरकार आयें तब सौंप दिया जाय! हुक्म दीजिये, सब सामान उसी मकानमें जैसा-का-तैसा सजा दिया जाय! हमलोग आपके पिता शास्त्रीजीके शुभचिन्तक मित्र हैं। लिहाजा चोरीसे बचानेके लिये ही ऐसी हरकत की गयी थी। तोबा करते हैं, माफी दीजिये।'

कारिंदोंने कहा—'जरूर ही पैदावार उन सालोंमें अच्छी न हुई थी। मगर इस साल पैदावार खूब अच्छी है। उम्मीद है कि बकाया रुपया सब वसूल हो जायगा। एक सालकी मियाद दी जाय ताकि हमलोग अपना-अपना हिसाब चुका सकें।'

साहबने सबको छोड़ दिया। रुपया सैकड़ाके सरकारी सूदके हिसाबसे साहबने सब कर्जदारोंको चुका दिया।

सारी जमींदारी वापस लेकर साहबने वह सब पण्डितानीजीके नाम करा दी। बदमाशोंने सारा सामान वापस कर दिया। कारिंदोंने सारा गबन धीरे-धीरे जमा कर दिया।

इस कहानीसे यह शिक्षा मिली कि मानवताके सामने जातीयता तुच्छ है।



दैवी सी० आई० डी०

आजमगढ़के कलक्टर मि० देसाई अपने बँगलेमें एक कमरेमें आरामकुरसीपर लेटे हुए अखबार देख रहे थे। इतवारकी छुट्टीका दिन था और सुबहके आठ बजे थे। तबतक उनका बड़ा लड़का काशीनाथ वहाँ आया और एक तरफ चुपचाप खड़ा हो गया। कलक्टर साहबने लड़केको आये हुए देख लिया, मगर वे कुछ बोले नहीं। कुछ समय बाद काशीनाथने ही बातचीत शुरू की।

काशीनाथ—तो मेरे लिये क्या हुक्म है?

देसाई—कुछ नहीं।

काशीनाथ—मैं विलायत जाऊँ?

देसाई—विलायत जाना पीछे। पहले मेरे घरसे निकल जाओ। मनमुखी लड़का मर जाय या भाग जाय तभी बेहतर है।

काशीनाथ—आज आप नाराज क्यों हो रहे हैं?

देसाई—मैं तुमको आई० सी० एस्० पास करनेके लिये विलायत भेजना चाहता था; परंतु तुमने अपनी माँसे कहा है कि तुम वहाँ जाकर बैरिस्टरी पास करना चाहते हो।

काशीनाथ—जी हाँ, कहा था। मगर एक बैरिस्टरकी इज्जत किसी कलक्टरसे कम नहीं होती। आमदनी भी कम नहीं होती। इसके अलावा एक वकीलको जितना मौका जनताकी सेवाके लिये मिल सकता है, उतना एक अफसरको नहीं।

देसाई—क्या आदमीके लिये जनताकी सेवा करना लाजमी है?

काशीनाथ—मेरी रायसे तो लाजमी है। अपना पेट तो जानवर भी भर लेता है। आदमी वह है जो दसको खिलाकर खाये।

देसाई—जी! तो मैं हुआ जानवर और जनाब हुए आदमी। मेरा आखिरी हुक्म है कि तुम एक घंटेके अंदर इस मकानसे निकल जाओ। चाहे जहाँ जाओ। चाहे जो करो। मुझसे कोई मतलब नहीं। एम्० ए० करा दिया, अपने फर्जसे अदा हुआ। अपनी औरतको साथ लो और जाकर दोनों आदमी जनताकी सेवा करो।

× × × ×

काशीनाथके जाते ही उस कमरेमें एक दिव्य सूरत प्रकट हुई। उस सूरतके हाथमें एक कापी और एक पेंसिल थी। वह ईश्वरीय दूत कुछ लिख रहा था।

देसाई—आप कौन हैं?

दूत—मैं ईश्वरका एक खुफिया हूँ।

देसाई—मैं नहीं समझा।

दूत—मैं परमात्माकी सी० आई० डी० का एक दूत हूँ।

देसाई—मैं नहीं समझा।

दूत—मैं यमराजका दूत हूँ।

देसाई—तो क्या मेरी मौत आ गयी है? यमदूत तो मरते वक्त आया करते हैं।

दूत—नहीं, मैं चित्रगुप्तका दूत हूँ। मैं सदा तुम्हारे साथ रहता हूँ और जो कुछ तुम कहते, सुनते या करते हो, सब मैं लिख लेता हूँ।

देसाई—क्यों?

दूत—ताकि मृत्यु हो जानेपर तुम अपने जीवनका हाल देख सको और अपना कर्मभोग प्राप्त कर सको।

देसाई—मैं दूसरोंके पीछे खुफिया लगाया करता हूँ। क्या मेरे पीछे भी खुफिया रहता है?

दूत—जी हाँ! केवल तुम्हारे ही पीछे क्यों? लेखक दूत सबके पीछे रहता है। हरेक नर-नारीके साथ एक-एक लेखक रहता है।

देसाई—मगर, मैंने आपको कभी जाना नहीं। पहले कभी देखा भी नहीं।

दूत—तुमलोग अगर जान लो तो खुफिया कैसा? तुम तभी देख सकते हो कि जब मैं दिखलायी देना चाहूँ। नहीं तो, रात-दिन साथ रहनेपर भी तुम मुझे नहीं जान सकते।

देसाई—अगर यहाँ कोई आ जाय तो वह आपको देख सकता है?

दूत—न। केवल तुम ही देख सकते हो।

देसाई—आप अभी क्या लिख रहे थे?

दूतने अपनी कापी देसाईके सामने कर दी। उसमें लिखा था—'आज देसाई अपने बड़े लड़केपर हुकूमतके नशेके कारण नाराज हुआ। वह घरसे निकालनेका अत्याचार करना चाहता है। मनमुखी होनेके कारण अन्याय करना चाहता है।'

देसाई—यह आपने क्या लिखा है?

दूत—जो बात थी, लिख दी।

देसाई—मनमुखी वह है या मैं?

दूत—अगर वह भी मनमुखी होगा तो उसका दूत लिखेगा। मेरी रायमें तुम मनमुखी हो इसलिये लिखा।

देसाई—केवल मनमुखी ही नहीं। आपने मुझे मनमुखी, नशेबाज, अत्याचारी और अन्यायी लिखा है।

दूत—सब सच लिखा है।

देसाई—बापका कहना लड़केको टालना चाहिये?

दूत—अगर गलत हो तो टालनेमें कोई हर्ज भी नहीं। तुम्हारे घरमें चार लड़के हैं। चारोंकी प्रकृति पृथक्-पृथक् है। कोई वकील बनेगा, कोई जज बनेगा, कोई डाक्टर बनेगा और कोई व्यापारी बनेगा। अगर तुम चाहो कि चारों लड़के मजिस्ट्रेट बन जायँ तो यह कैसे हो सकता है। चूँकि तुम गलतीपर हो और तुम्हारा लड़का सचाईपर है, इसलिये तुम्हारा अन्याय हुआ कि नहीं?

देसाई—आपकी यह दलील मेरी समझमें आ गयी।

दूतने लिखा—अपनी गलती मान लेनेकी आदत है।

× × × ×

तबतक रोती और काँपती हुई काशीनाथकी माताने कमरेमें प्रवेश किया। देवदूत सामनेसे हट गया और देसाईके पीछे जा खड़ा हुआ।

स्त्री—यह आप क्या कर रहे हैं? लड़केको जरा-सी बातपर घरसे निकाल रहे हैं?

देसाई—पिताका हुक्म न मानना जरा-सी बात है?

स्त्री—वह सुशील और धर्मात्मा है।

देसाई—मगर मनमुखी और नमकहराम भी है।

स्त्री—उसके निकलते ही मेरे प्राण निकल जायँगे।

देसाई—अच्छा, आप पतिके साथ नहीं, बल्कि पुत्रके साथ सती होंगी?

देसाईका यह व्यङ्ग्यबाण बड़ा घातक हुआ। स्त्रीने अपनी छातीमें एक घूँसा मारा और वहीं बेहोश होकर गिर पड़ी।

देवदूतकी पेंसिल चल रही थी। देसाईने देखा कि उसने यह लिखा है—'क्षणिक कलक्टरीकी प्रभुताके नशेसे मतवाले होकर देसाईने अपनी सती-साध्वी स्त्रीको मर्मान्त पीड़ा पहुँचायी है।

आश्रितका अपमान नहीं करना चाहिये। असह्य अपमान कालके समान होता है।'

देसाई—स्त्रीको पतिकी हाँ-में-हाँ मिलानी चाहिये या पुत्रकी हाँ-में-हाँ मिलानी चाहिये?

दूत—जहाँ जैसा मौका हो। पतिके साथ स्त्रीका प्रेम होता है; परंतु स्त्रीका स्नेह पुत्रके ही साथ होता है। जब पुत्रको आत्मज कहा जाता है, तब माताका उसके साथ सम्बन्ध क्यों नहीं माना जायगा?

देसाई—मैंने आपकी यह बात भी मानी।

देवदूतने लिखा—'अपनी गलती माननेकी आदत है, मगर अपना हठ जल्दी छोड़नेकी आदत नहीं है।' स्वस्थ होकर देसाईकी स्त्री भीतर चली गयी।

× × × ×

देसाई—मैं रोजाना पूजा किया करता हूँ। उसके बारेमें आपने क्या लिखा?

देवदूतने एक पृष्ठ खोलकर दिखलाया। उसपर लिखा था—'धार्मिकताके दिखावेसे पब्लिककी श्रद्धा लेनेका ढोंग करता है। पूजा नहीं करता है; क्योंकि देसाई नास्तिक है।'

देसाई—मैंने परसाल एक हजार मुहताजोंको भोजन कराया था, उसके बारेमें आपने क्या लिखा?

देवदूतने एक पन्ना खोलकर दिखलाया। देसाई पढ़ने लगे—'पब्लिकसे मुफ्तमें वाहवाही लूटनेका एक षड्यन्त्र मात्र; क्योंकि देसाईके मनमें दया नहीं है।'

देसाई—मैं पब्लिकके जलसोंमें शरीक होता हूँ और लेक्चर देता हूँ, उसके लिये क्या लिखा?

देवदूतने एक सफा दिखाया। लिखा था—'ताकि लोग उसे

समयके साथ चलनेवाला समझें। हालाँकि यह आदमी परिवर्तनका परम शत्रु है।

देसाई—आपने तो मेरे हृदयकी छिपी बातें लिख रखी हैं।

देवदूत—क्योंकि तुम मुझे धोखा नहीं दे सकते हो।

देसाई—मैं आजतक, कितने बुरे काम कर चुका?

दूत—एक हजार।

देसाई—और अच्छे काम मैंने कितने किये?

दूत—पाँच।

देसाई—बस?

दूत—बस।

देसाई—तो सुनिये साहब! सच बात यह है कि न तो मैं परमात्माको मानता हूँ और न उसके दूतको।

दूत लिखने लगा। लिख चुकनेपर देसाईने पढ़ा कि 'मुझे प्रत्यक्षमें देखकर भी प्रमाण चाहनेवाला देसाई वज्र मूर्ख है और कलक्टरीके काबिल नहीं। इसका दिमाग खराब है और काबिले पागलखानेके है।'

× × × ×

अन्तिम प्रणाम करनेके लिये तबतक काशीनाथ वहाँ आया। वह घरसे निकल जानेकी तैयारी कर आया था।

काशीनाथ—पिताजी! मैं नालायक हूँ, इसलिये मुझे घरसे चले जानेकी आज्ञा दीजिये। मैं तैयार होकर विदा माँगने आया हूँ।

देसाई—नहीं बेटा! तुम कहीं मत जाओ। तुम वकील बन सकते हो। मेरा खयाल गलत था। जो आदमी जिस कामको पसन्द करे, उसके लिये वही काम लाभदायक हो सकता है।

काशीनाथ—आपने मेरी माताको चोट पहुँचायी है।

देसाई—गुस्सेसे बेजा बक गया था। उसके लिये मैं तुम्हारी

मातासे और तुमसे माफी माँगता हूँ। चूँकि तुम बालिग हो गये हो और बालिग लड़का बतौर दोस्तके होता है, इसलिये तुम मुझे माफ करो।

काशीनाथकी आँखोंमें आँसू भर आये। वह अपने पिताके चरणोंमें गिर पड़ा और रोने लगा। देसाईने उठकर उसको छातीसे लगा लिया और कहा—'आजतक मैं पाखंडी था, नास्तिक था और घमण्डी था। मैं नकली काम किया करता था। आज परमात्माने मेरी आँखें खोल दीं। जो नहीं जाना था, सो जान लिया और जो नहीं देखा था, सो देख लिया। ईश्वरकी यह एक बड़ी कृपा है कि जो मुझपर उतरी।'

काशीनाथ बहुत प्रसन्न हुआ और भीतर गया। यात्राकी तैयारी कैन्सिल कर दी गयी। सब घर प्रसन्न था। पर यह कोई नहीं जानता था कि यह परिवर्तन हुआ कैसे?

देसाईने देखा कि देवदूत लिख रहा है—'आज देसाईने प्रतिज्ञा की कि वह अपने नकली जीवनको छोड़ देगा और असली जीवनको ग्रहण करेगा। आज उसके जीवनमें एक खास परिवर्तन हो गया। भविष्यमें वह नेक आदमी बननेकी कोशिश करता रहेगा।'



एक स्वामिभक्त बालक

उस समय भारतकी राजधानी उज्जैनमें थी। राजा वीर विक्रमादित्य उस समय भारत-सम्राट् थे। आपको बालकोंसे बड़ा प्रेम था। महलके भीतर प्रत्येक कार्यपर बालक ही नियुक्त थे; क्योंकि बालक सीधे, सच्चे, सरल, सुखद, सुभग और सुन्दर होते हैं। वे सहसा कोई भी अपराध नहीं करते। रामायणमें भी लिखा है—***'बंदउँ बालरूप सोइ रामू।'*** अर्थात् प्रत्येकका बालक (पशु-पक्षीका भी) रामका स्वरूप होता है, इसी विचारसे भारत-सम्राट्ने अपने 'शरीर-रक्षक' भी बालक ही बनाये थे और महलका सारा प्रबन्ध बालकोंको सौंप दिया था।

गरमीकी रात थी। सतखंडेपर महाराज सो रहे थे। पलंगके नीचे कालीनपर उनके शरीर-रक्षक सो रहे थे।

सहसा रोनेकी आवाज सुनकर महाराज जाग पड़े। उस समय आधी रात बीत चुकी थी। एक स्त्रीको रोती हुई सुनकर महाराजने कहा—'पहरेपर कौन है?'

पाँच लड़के एक-एक घंटा जागकर महाराजका पहरा देते थे। उस समय 'किशोर' नामक एक क्षत्रिय बालकका पहरा था। वह चुपचाप सामने जा खड़ा हुआ।

'कौन? किशोर?'—सम्राट्ने कहा।

'जी अन्नदाता! आज्ञा।'—किशोरने हाथ जोड़कर कहा।

किसी स्त्रीके रोनेकी आवाज सुनते हो किशोर सिंह?—राजा बोले।

'जी सरकार!'—किशोरने कहा।

'जाकर देखो कि इस समय कौन रोता है और क्यों रोता है?' दीनबन्धु सम्राट्ने आदेश दिया।

अपनी तलवार लेकर किशोर सिंह गुप्तद्वारसे महलके बाहर निकल गया।

किशोरकी आज्ञापालक-विधिको खुद देखनेके लिये सम्राट् भी उसके पीछे छिपते हुए महलसे बाहर हो गये। सावधान सम्राट् वही है, जो अपने नौकरोंकी स्वयं जाँच-पड़ताल करता है।

रोनेकी आवाज कालीदेवीके मन्दिरसे आ रही है। किशोरने मन्दिरमें जाकर देखा कि एक अतीव सुन्दर स्त्री रो रही है। मन्दिरके पीछे एक रोशनदान था। उसके द्वारा सम्राट् विक्रमादित्य भीतरका हाल देख रहे थे।

'आप कौन हैं देवि!'—किशोरने पूछा।

'मैं राज्यलक्ष्मी हूँ।'—देवीने कहा।

'आप क्यों रो रही हैं इस समय?'—किशोरने पूछा।

'राजा वीर विक्रमादित्यकी अकाल मृत्यु आ गयी है। ऐसा राजा फिर मुझे कहाँ मिलेगा। इसीसे रोती हूँ।'—देवीने उत्तर दिया।

'राजाकी मौत कब होगी?'—किशोरने पूछा।

'आज प्रातः ठीक चार बजे'—देवीने कहा।

'महाराजके जीवनकी रक्षा किसी प्रकार हो सकती है?'—किशोरने आँखोंमें आँसू भरकर पूछा।

'हाँ, हो सकती है; क्योंकि उपाय सब संकटोंका होता है।' देवीने अपने आँसू पोंछे।

'बतलाइये! बतलाइये! हमारे हृदय-सम्राट् कैसे बच सकते हैं?'—किशोरने जल्दी-जल्दी पूछा।

'अगर कोई कुँआरा व्यक्ति कालीदेवीके सामने अपना बलिदान कर दे तो राजा बच जायगा।' इतना कहकर 'राज्यलक्ष्मी' अन्तर्धान हो गयी।

अपने-आप किशोर कहने लगा—'कुँआरा व्यक्ति मैं कहाँ खोजने जाऊँगा! मैं खुद कुँआरा हूँ। यदि सौ किशोरोंके मरनेसे ऐसे सम्राट्की जीवन-रक्षा हो तो भी कोई बात नहीं। मैं अपना बलिदान करूँगा।'—इतना कहकर किशोरने तलवार नंगी की और अपना गला क़ाटकर देवीके चरणोंमें डाल दिया।

यह हाल देखकर राजाने मन्दिरमें प्रवेश किया। स्वामिभक्त बालककी लाश देखकर महाराजने उसको उठा लिया।

सम्राट्ने देवीसे प्रार्थना की, 'या तो इस लड़केको जीवित कीजिये, नहीं तो मैं भी तलवारसे अपना गला काटता हूँ। मैं तो समझता था कि राजासे कोई हार्दिक और निःस्वार्थ प्रेम नहीं करता। ओह! किशोर-जैसा स्वामिभक्त अब मुझे कहाँ मिलेगा!' इतना कहकर राजाने तलवार अपनी गरदनपर चला दी। तुरंत काली माई प्रकट हो गयीं और देवीने राजाका हाथ पकड़ लिया।

'क्या बात है राजन्! तुमको जीवित रखनेके लिये बलिदान लिया गया है। अब तुम नहीं मर सकते।' देवीने तलवार छीन ली।

'माता! यदि आप मुझपर प्रसन्न हैं तो इस लड़केको जीवित कीजिये। यह लड़का जीवित न हुआ तो मैं जीता हुआ भी मृतक बना रहूँगा! इसका गम मुझे खाता रहेगा।'

'अच्छा, तुम जाओ, तुम्हारे पीछे तुम्हारा लड़का भी जाता है।'—देवीने मुसकराकर कहा।

राजा चला गया और अपने पलंगपर जा लेटा। देवीने लड़केका सिर उसके धड़से लगाया और उसे जीवित कर दिया। अपनी तलवार लेकर किशोर भी महलकी छतपर जा पहुँचा।

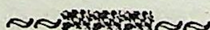
'आ गये किशोर!' सम्राट्ने पूछा।

'जी अन्नदाता!'—किशोर बोला।

'वह स्त्री क्यों रो रही थी?' सम्राट्ने पूछा।

'कुछ नहीं सरकार! उसकी सासने उसे पीटा था। मैं समझा-बुझाकर उसे उसके घर पहुँचा आया और उसकी सासको धमका आया कि अब कभी बहूको मारा-पीटा तो तुम्हारी शिकायत महाराजसे कर दी जायगी।' किशोरने बहाना बनाया।

'तुम धन्य हो किशोर! तुम्हारे माता-पिता धन्य हैं। आजसे तुम मेरे प्रधान सेनापति हुए।' सम्राट्ने किशोरको हृदयसे लगाकर कहा।



गीताप्रेसकी निजी दूकानें तथा स्टेशन-स्टाल

गीताप्रेस, गोरखपुर—२७३००५, फोन (०५५१) ३३४७२१; फैक्स (०५५१) ३३६९९७

१. कलकत्ता-	गोबिन्दभवन-कार्यालय	©(०३३) २३८६८९४
पिन-७००००७	१५१, महात्मा गाँधी रोड	फैक्स (०३३) २३८०२५१
२. दिल्ली-	गीताप्रेस, गोरखपुरकी पुस्तक-दूकान;	©(०११) ३२६९६७८
पिन-११०००६	२६०९, नयी सड़क	फैक्स (०११) ३२५९१४०
३. पटना-	गीताप्रेस, गोरखपुरकी पुस्तक-दूकान;	©(०६१२) ६६२८७९
पिन-८००००४	अशोकराजपथ, बड़े अस्पतालके सदर फाटकके सामने	
४. कानपुर-	गीताप्रेस, गोरखपुरकी पुस्तक-दूकान;	©(०५१२) ३५२३५१
पिन-२०८००१	२४/५५, बिरहाना रोड	फैक्स (०५१२) ३५२३५१
५. वाराणसी-	गीताप्रेस, गोरखपुरकी पुस्तक-दूकान;	©(०५४२) ३५३५५१
पिन-२२१००१	५९/९, नीचीबाग	
६. हरिद्वार-	गीताप्रेस, गोरखपुरकी पुस्तक-दूकान;	©(०१३३) ४२२६५७
पिन-२४९४०१	सब्जीमण्डी, मोतीबाजार	
७. सूरत-	गीताप्रेस, गोरखपुरकी पुस्तक-दूकान;	©(०२६१) २३८०६५,
पिन-३९५००१	वैभव एपार्टमेन्ट, नूतन निवासके सामने; भटार रोड	२३७३६२
८. चूरू-	गीताप्रेस, गोरखपुरकी पुस्तक-दूकान;	© (०१५६२) ५२६७४
पिन-३३१००१	ऋषिकुल ब्रह्मचर्याश्रम, पुरानी सड़क	फुटकर बिक्री-केन्द्र
९. ऋषिकेश-	गीताभवन, गङ्गापार, पो० स्वर्गाश्रम;	©(०१३५) ४३०१२२
पिन-२४९३०४	(मुनिकी रेती, ऋषिकेशमें भी फुटकर बिक्री-केन्द्र)	
१०. कटक-	गीताप्रेस, गोरखपुरकी पुस्तक-दूकान;	
पिन-७५३०१२	भरतिया टावर्स, बादाम बाड़ी	
११. इन्दौर-	गीताप्रेस, गोरखपुरकी पुस्तक-दूकान;	
पिन-४५२००१	जी० ५ श्रीवर्धन, ४ आर. एन. टी. मार्ग	

स्टेशन-स्टाल [प्लेटफार्म नं० (कोष्ठ) में]

दिल्ली जंक्शन (प्लेटफार्म नं० १२); नयी दिल्ली (नं० ८-९); हजरत निजामुद्दीन [दिल्ली] (नं० ४-५); कोटा [राजस्थान] (नं० १); बीकानेर (नं० १); गोरखपुर [उ० प्र०] (नं० १); कानपुर (नं० १); लखनऊ [एन० ई० रेलवे]; वाराणसी (नं० ४-५); मुगलसराय जं० (नं० ३-४); हरिद्वार (नं० १); पटना जंक्शन (मुख्य प्रवेशद्वार); धनबाद (नं० २-३); मुजफ्फरपुर (नं० १); हावड़ा स्टेशन (नं० ८ तथा १८ दोनोंपर); सियालदा मेन (नं० ८); आसनसोल (नं० ५); औरंगाबाद [महाराष्ट्र] (नं० १); सिकन्दराबाद [आं० प्र०] (नं० १); गुवाहाटी जं० (मुसाफिरखाना) एवं अन्तर्राज्यीय बस-अड्डा, दिल्ली।

visit us at-
www.gitapress.org

e-mail:
gitapres@ndf.vsnl.net.in